f'k{kk dk vf/kdkj

सर्व शिक्षा अभियान

सब पढ़ें सब बढ़ें

बी०टी०सी० चतुर्थ सेमेस्टर

सामान्य विषय- 04

शांति शिक्षा एवं सतत् विकास

राज्य शिक्षा संस्थान, उ0प्र0,

इलाहाबाद

बी0टी0सी0 चतुर्थ सेमेस्टर

e[; lj{kd % Jh vt; dqekj flag] आई.ए.एस., सचिव, बेसिक शिक्षा, उ0प्र0, शासन, लखनऊ

lj{kd % Jherh 'khry oekZ] आई.ए.एस. राज्य परियोजना निदेशक, सर्व शिक्षा अभियान, लखनऊ

funs'ku % MkW0 loZsUnz foØe cgknqj flag] funs'kd] राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, उ0प्र0

leUo;u % Jh fnO;dkUr 'kqDy] çkpk;Z] राज्य शिक्षा संस्थान, उ0प्र0, इलाहाबाद

ijke'kZ % Jh vt; dqekj flag] lg;qDr funs'kd] (एस0एस0ए0) राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, उ0प्र0, लखनऊ

ys[kd % डॉ0 (श्रीमती) सन्ध्या सिंह, श्रीमती आरती कैथवास, श्रीमती अनुराधा पाण्डेय, श्रीमती अंशिका यादव, श्रीमती जया शुक्ला।

dEI;Vj dEikftx % राजेश कुमार यादव

'kkfr f'k{kk ,o lrr fodkl

d{kk f'k{k.k % fo"k;oLr

- शांति शिक्षा की अवधारणा, शांति के लिये शिक्षा की वर्तमान आवश्यकता।
- शांति शिक्षा में भारतीय जीवन मूल्य, शान्ति कौशल, शान्ति अभिवृतिया।
- व्यक्तित्व एवं सामाजिक विकास व्यक्तित्व, का स्वरूप , विकास और निर्धारण, आदत एवं स्वभाव (चित्तप्रवृत्ति) स्व जागरूकता व्यक्तित्व विकास में वातावरण का प्रभाव। व्यक्तित्व के 5 बड़े गुण खुलापन चैतन्यता बहिर्मुखता सहमतिजन्यता स्नायुविकृति व्यक्तित्व की सामाजिकता और शान्ति।
- सहपाठी के आन्तरिक सम्बंधों की समझ एवं आपसी सम्बंधो का विकास–
  क. बच्चों के विकास में उसके साथियों की भूमिका
  (ख) साथी के सम्बंधों की विशेषता
  (ग) सामाजिक बोध
  (घ) अक्रामकता
  (ङ) तकनीकी एवं साथी सम्बंध
  (च) साथी सम्बंधो में विविधता एवं सामाजिक बोध
  (छ) स्वस्थ साथ–सम्बंधों को बढ़ावा
- चरित्र एवं नैतिक शिक्षा, सामाज अनुकूल विकास, बच्चों के चरित्र निर्माण में माता–पिता तथा परिवार के सदस्यों का योगदान इसे अच्छा बनाने में कुशल शिक्षक का महत्व
- व्यवहारवाद में उद्दीपन एवं अनुक्रिया शानित के लिए निर्माणकारी व्यवहार के प्रोत्साहन हेतु रणनीति अवांछित व्यवहार को सकारात्मक तरीके से हतोत्साहित करने की रणनीतियाँ सकारात्मक व्यावहारिक हस्तक्षेप और सहयोग
- हिंसा क्या है और यह क्या करती है ?
  क. हिंसा के प्रकार, मौखिक, मनोवैज्ञानिक, शारीरिक, ढांचागत, लोकप्रिय, संस्कृति में अश्लीलता

ख. हिंसा के मोर्चे – जाति, लिंग, भेदभाव, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, विज्ञापन, गरीबी

ग. हिंसा का खतरा

घ. मीडिया और हिंसा

ङ. विवादों के शांतिपूर्ण हल

च. विवादों के बाद समझौता

- भारत में शान्ति हेतु दार्शनिक चिन्तन, गाँधी दर्शन और शान्ति।
- तनाव प्रबंधन आन्तरिक शांति–अष्टांग, योग, यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार धारणा, ध्यान, समाधिं
- शांति मूल्य, मानवाधिकार और लोकतंत्र भारत में धार्मिक सहिष्णुता एवं राष्ट्रीय एकता, वैश्वीकरण और शान्ति।
- सतत् विकास सतत विकास का अर्थ एवं आवश्यकता पर्यावरण एवं सतत विकास

शांति शिक्षा

भारतीय शिक्षा का इतिहास अति प्राचीन है। वैदिक काल से लेकर आज तक भारतीय शिक्षा निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर रही है। समय के साथ परिवर्तित हो रही सामाजिक परिस्थितियों के अनुरूप शिक्षा के स्वरूप में भी परिवर्तन तथा संशोधन किया जाता रहा है। वर्तमान में शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञानार्जन तक ही सीमित नहीं रहा वरन् शिक्षा राष्ट्रीय विकास की प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण अंग बन चुकी है। वर्तमान में शिक्षा का सर्वप्रमुख कार्य मानव संसाधनों का यथोचित् विकास करना है। इस दृष्टि से देखा जाए तो आज शिक्षा के द्वार पर अनेक नूतन प्रवृत्तियाँ दस्तक दे रही है, जिन्हें शीघ्र आत्मसात् करना परम आवश्यक हो गया है। वस्तुतः परिवर्तन की माँग के अनुरूप आधुनिक, प्रगतिशील तथा विश्वव्यापी दृष्टिकोण अपनाकर ही भारतीय शिक्षा अपने स्वरूप गुणवत्ता और अस्तित्व को बनाये रखने में सफल हो सकती है। इस परिप्रेक्ष्य में मानवाधिकार शिक्षा, शान्ति शिक्षा, समावेशी शिक्षा, महिला सशक्तिकरण हेतु शिक्षा, निजीकरण व वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में शिक्षा आदि अनेकानेक नूतन प्रकरण शिक्षा के क्षेत्र में चर्चित मुद्दे बन गए है। इस परिप्रेक्ष्य में भारतीय शिक्षा प्रणाली में आ रही नूतन प्रवृत्तियों व नवाचारों का स्वागत करना स्वाभाविक है। इधर कुछ समय से मानव समाज में बढ़ती अशान्ति, विवाद व कलह के फलस्वरूप विगत कुछ समय से शान्ति शिक्षा की माँग बढ़ रही है। निःसन्देह शिक्षा के माध्यम से शान्ति स्थापित करने के लक्ष्य की पूर्ति सरलता से की जा सकती है। आज बच्चों को ऐसी शिक्षा देने की आवश्यकता है जिससे उसमें आतंकवाद, हिंसा, विद्वेष, जैसी अवांछनीय घटनाओं के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण विकसित हो तथा परस्पर सौहार्द, सह–आस्तित्व, सहयोग, सहिष्णुता भाईचारा जैसे सकारात्मक गुण विकसित हो सके। संक्षेप में शान्ति शिक्षा नैतिक विकास के साथ उन मूल्यों और दृष्टिकोण के पोषण पर बल देती है जो प्रकृति और मानव जगत् के बीच सामंजस्य स्थापित करने के लिए आवश्यक है।

e|[; f'k{k.k fcUnq

- शांति शिक्षा की अवधारणा
- वर्तमान आवश्यकता
- भारतीय जीवन मूल्य
- शांति कौशल, अभिवृत्तियाँ
- व्यक्तित्व का अर्थ एवं स्वरूप
- व्यक्तित्व एवं सामाजिक विकास
- व्यक्तित्व का विकास तथा निर्धारण
- व्यक्तित्व विकास में वातावरण का प्रभाव
- व्यक्तित्व के पाँच बड़े शीलगुण
- व्यक्तित्व की सामाजिकता और शांति

'kkfr f'k{kk ls vfHkçk;

शांति शिक्षा से अभिप्राय ऐसी शिक्षा से है जो व्यक्तियों में ऐसे मूल्यों, कौशलों, अभिवृत्तियों का समावेश करे जिससे उन्हें दूसरों के साथ सौहार्दपूर्ण व्यवहार रखने वाले एवं उत्तरदायी नागरिक बनने में मदद मिले। ऐतिहासिक दृष्टि से नैतिक शिक्षा एवं मूल्य शिक्षा शांति शिक्षा के लिए पूर्वज है या दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि ये शांति शिक्षा के लिए आधार है। शांति शिक्षा मूल्यों के उद्देश्यों को ठोस रूप देती है और उनके आंतरीकरण को प्रेरित करती है। शांति के लिए शिक्षा को ऐसे ज्ञान,

कौशल, मूल्यों एवं अभिरुचि का पोषण करना होता है जिससे शांति की संस्कृति निर्मित होती है। अंहिसक तरीके से द्वन्द्वों का समाधान करने वाले अमनपसंद लोग तैयार करना इसकी एक दीर्घकालिक उद्देश्य/रणनीति है। शांति शिक्षा समग्रतामूलक है। मानवीय मूल्यों के एक ढाँचे के भीतर बच्चों का भौतिक, भावनात्मक, बौद्धिक और सामाजिक विकास इसके दायरे/परिधि में आता है। संक्षेप में शांति शिक्षा के समग्र रूप के दो निहितार्थ है–

- लोगों को हिंसा का मार्ग चुनने के बजाय शांति का मार्ग चुनने में सशक्त बनाना।
- उन्हें शांति का उपभोक्ता बनने के बजाय उसका सर्जक बनाना।

इस प्रकार शांति शिक्षा का लक्ष्य व्यक्ति का समग्र विकास है। शांति शिक्षा प्यार, सत्य, न्याय, समानता, सहनशीलता, सौहार्द, विनम्रता , एकजुटता और आत्मसंयम इन सारे मूल्यों को व्यवहार में लाने पर बल देती है। शांति शिक्षा के आधार के रूप में धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा जहाँ एक ओर धर्म के विषय में उसकी बुनियाद और उनमें अर्न्तनिहित मूल्यों के विषय में जानने तथा सही समझ के लिए प्रेरित करती है, वहीं दूसरी ओर नैतिक शिक्षा मानव के आचार विचार व्यवहार को सकारात्मक दिशा में ले जाने में सहयोग देती है।

अत्यन्त आवश्यक मूल्यों के क्षरण और समाज में बढ़ती कटुता को देखते हुए शांति शिक्षा को एक सामाजिक और नैतिक मूल्यों का संवर्द्धन करने वाले एक *^rkdroj vkstkj*@^l 'kDr midj.k** के रूप में प्रयोग करने की वकालत की जा रही है। अतःएव शिक्षा के एक पाठ्यक्रम के रूप में शांति शिक्षा उन सार्वभौमिक और शाश्वत मूल्यों का पोषण करें जो हमारे लोगों को विविधता में एकता और अखण्डता की दिशा में ले सके।

'kkafr ds fy, f'k{kk dh orZeku vko';drk

शांति अभिमुख व्यक्तित्व निर्माण वर्तमान की एक प्रमुख आवश्यकता है। शिक्षा के अन्तर्गत शांति अभिमुख व्यक्तित्व निर्माण के घटक है– अपनी और अपने परिवेश की साफ–सफाई, दूसरों और बड़ों के लिए सम्मान, श्रम की कद्र, ईमानदारी प्यार, साझेदारी, और सहकारिता, सहनशीलता, नियमितता, समय की पांबदी, उत्तरदायित्व आदि। वास्तव में सभी बच्चे स्वभावतः प्रेम करने वाले और दयालू होते है, साथ ही इससे भिन्न होने की क्षमता भी उनके अन्दर (भीतर) विद्यमान होती है। इसलिए उनके भीतर जो कुछ भी रचनात्मक या सृजनात्मक है उसे पुष्ट परिष्कृत और संवर्धित करने की आवश्यकता है। इसके साथ ही उनके भीतर हिंसात्मक प्रवृतियों को पनपने से पहले उसकी रोकथाम करना भी आवश्यक है। प्राथमिक स्तर पर बच्चों में शांति शिक्षा के अन्तर्गत इसका उद्देश्य बच्चों को प्रकृति की विविधता, सुन्दरता और सामंजस्य का आनन्द उठाने में मद्द करना। उन्हें ऐसे कौशल विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जो दूसरों के साथ सहज रहने के लिए आवश्यक है। (विशेषतः सुनने की कला) और प्रकृति के साथ सहज रहने के लिए आवश्यक है– सौन्दर्य मूलक संवेदनशीलता तथा

उत्तरदायित्व का बोध। जैसे–जैसे बच्चे बड़े होते है और माध्यमिक विद्यालयों के चरण तक पहुँचते है वे अमूर्त विचारों को ग्रहण करने लगते है तथा साथ ही सीमित रूप में अपने आस–पास होने वालों विभिन्न घटनाओं पर तर्कसंगत और सम्बंधमूलक विधि से सोचने की क्षमता विकसित कर लेते है। चूंकि विद्यालय ऐसी जगह है जहाँ विभिन्न धार्मिक, सांस्कृतिक और क्षेत्रीय पृष्ठभूमि से आने वाले बच्चे एक जगह इकट्ठा होते है, इसलिए विद्यार्थियों को लोकतन्त्र, समानता, न्याय, स्वतन्त्रता, गरिमा और मानवाधिकार में निहित मूल्यों को समझने की संज्ञानात्मक क्षमता से लैस होने की आवश्यकता है। अतः उन्हें सांस्कृतिक बहुलता के प्रति सकारात्मक सोच एवं शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के महत्व को समझने की आवश्यकता है।

शांति के लिए शिक्षा की आवश्यकता इस सन्दर्भ में भी है वे सम्यक् ढंग से सूचना से व्यवहार करने, रचनात्मक, तथा स्वचिंतन और स्वानुशासन के कौशलों का विकास करें। ये कौशल उन्हें समर्थ बनाएंगे कि वे समूह में भागीदारी कर सके, दूसरों के साथ जिम्मेदारी से सम्बन्ध बना सके और समझ के साथ द्वन्द्वों का निपटारा कर सके। इसके साथ ही लिंग, जाति, श्रेणी और धर्म पर आधारित सम्प्रदायवाद और भेदभाव जैसे हिंसा के रूपों के प्रति एक सूचित नकारात्मक रवैया विकसित कर सके। इसके लिए उनमें ऐसी समझ के विकास की जरूरत है ताकि वे परिपक्वता के साथ भष्ट्राचार, भ्रमित करने वाले विज्ञापनों तथा मीडिया द्वारा जो भी हिंसक और अस्वथ्यकर दिखाया जा रहा है उसे सम्बोधित कर सके।

इन सबमें ज्यादा जरूरी है कि उन्हें समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष और लोकतन्त्र के उत्तरदायी नागरिक बनने को मूल अवधारणा में शिक्षित करना। वास्तव में नागरिकता लोकतन्त्र का सार है और यह नहीं हो सकता कि हम नागरिकों को संविधान के मूल्यों और दृष्टिकोण से अनभिज्ञ रखे तथा फिर उनसे जिम्मेदार नागरिक बनने की आस लगाये। अतः शांति के लिए शिक्षा का असल उद्‌देश्य तथा आवश्यकता बच्चों, युवाओं को नागरिकता सम्बन्धी कर्त्तव्यों को ठीक से निभाने की शिक्षा व प्रशिक्षण देना। निष्कर्षतः हम कह सकते है कि शिक्षा व्यक्तित्व के निर्माण का आधार है। प्रारम्भिक शिक्षा मानव जीवन का मूलाधार है, माध्यमिक शिक्षा तना है तथा उच्च शिक्षा जीवन का विकासात्मक प्रसार है। मानव व्यक्ति को शिक्षित करने का तात्पर्य है, दिशा देना। हम बच्चों को या तो शांति की दिशा में ले जा सकते है या उससे उल्टी दिशा में। शांति के लिए शिक्षा की वर्तमान आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि शिक्षा को शांति के लिए शिक्षा मानवीय बना सकती हैः शिक्षित होने का मतलब है पूर्णतः मानव होना। समुदाय में रहने की जरूरत हमारी मानवता के लिए बुनियादी आधार है। इसलिए दूसरों के साथ सामंजस्यपूर्वक जीने का कौशल विकसित करना शिक्षा के सार में निहित है।

'kkfUr f'k{kk e: Hkkjrh; thou eY;

मानव अपने भौतिक तथा सामाजिक वातावरण के साथ अपने समायोजन की प्रक्रिया में तरह–तरह के अनुभव प्राप्त करता है तथा अपने इन विभिन्न प्रकार के अनुभवों के आधार पर जीवन के

कुछ सामान्य सिद्धान्त विकसित करता है। व्यक्ति द्वारा अपने लिए निर्धारित जीवन के इन सामान्य सिद्धान्तों को ही मूल्यों के नाम से पुकारा जाता है। मूल्य वास्तव में मानव के व्यक्तित्व का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष प्रतिबिम्बित करते है। जब हम शिक्षा की बात करते है तो सामान्य अर्थों में यह समझा जाता है कि इसमें हमें वस्तुगत ज्ञान प्राप्त होता है तथा जिसके बल पर हमें कोई रोजगार प्राप्त कर सकते है। वस्तुपरक शिक्षा हर क्षेत्र में उपयोगी है। परन्तु जीवन में केवल पदार्थ ही महत्वपूर्ण नहीं है। पदार्थों का अध्ययन आवश्यक है, राष्ट्र की भौतिक दशा सुधारने के लिए, जीवन मूल्यों का उपयोग हम राष्ट्र की उन्नति के लिए कर सकते हैं।

मूल्य और शिक्षा में बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। मूल्यों का सम्बन्ध उन चीजों से होता, जिसकी हम कामना करते है या इच्छा करते हैं और उचित मानते हैं। जबकि शिक्षा एक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से बच्चों में ऐसे विशेष गुणों, दृष्टिकोणों, मूल्यों तथा व्यवहार का विकास होता है जो सार्वभौमिक दृष्टि से हितकारी हो। अतः मूल्य और शिक्षा में साध्य एवं साधन का, सिद्धान्त एवं व्यवहार का, सम्बन्ध होता है। मूल्य आत्मा के समान होता है तो शिक्षा शरीर के समान है। मूल्यों का विकास करना शिक्षा अपना कार्य, उद्देश्य तथा कर्त्तव्य मानती है। वर्तमान समय में शान्ति शिक्षा मानव समाज की प्रमुख आवश्यकता है जिसके अन्तर्गत मानवीय मूल्यों के प्रति निष्ठा, सामाजिक न्याय, राष्ट्रीय एकता, वैज्ञानिक स्वभाव, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्वतन्त्रता, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता, इत्यादि उत्कृष्ट गुणकारी मूल्यों को रखा गया है।

अस्तु मूल्य का क्षेत्र मनुष्य और उसके जीवन एवं अनुभव तक सीमित है। मूल्यों की व्याप्ति हमारे जीवन में आदि से अन्त तक है। भाषिक दृष्टि से जीवन मूल्य के सम्बनध में यह कहा जा सकता है कि जीवन मूल्य एक समस्त पद है जिसमें जीवन तथा मूल्य अलग–अलग दो शब्द है। इन दोनों शब्दों के संयोग से जीवन मूल्य शब्द बनता है। जीवन मूल्य का स्रोत व्यक्ति, परिवार, आचार–विचार, दूसरों के प्रति व्यवहार, जीवन पद्धति राजनीति धर्म आदि है अर्थात मूल्य का कार्यक्षेत्र मनुष्य जीवन तथा मनुष्य समाज है।

हमारी भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत जीवन दर्शन का मूलाधार ही मूल्य है अर्थात् भारत का पौराणिक दर्शन मूल्य दर्शन हैं। ऋत, सत्य, आनन्दतत्व, पुरूषार्थ की कल्पना, वर्णाश्रम व्यवस्था, आदि के माध्यम से जीवन मूल्यों की अवधारणा अभिव्यक्त हुई है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि समय और आवश्यकतानुसार मूल्य सदा परिवर्तनशील है। मूल्य बदलने से जीवन पद्धति बदल जाती है और जीवन पद्धति बदलने से मूल्य भी बदल जाते है। वर्तमान में हमारा देश लोकतंत्रीय मूल्यों का पोषक है। स्वतन्त्रता समानता, भ्रातृत्व, न्याय, समाजवाद और पंथ निरपेक्षता उसका प्राण है किन्तु अमानवीयता अलगाववाद, जातिवाद, सम्प्रदायवाद आदि विघटनकारी शक्तियाँ हमारे लोकतंत्र को कमजोर कर रही है। अतः आवश्यक है कि विश्वबन्धुत्व तथा वसुधैव कुटुम्बकम् जैसे प्राचीन जीवन मूल्यों व लोकतंत्रीय मूल्यों व आदर्शों से अपने मानव जीवन को चरितार्थ करें।

'kkfr dk'ky

प्रायः यह अपेक्षा की जाती है कि विद्यार्थियों में ऐसा कौशल या व्यवहार विकसित किया जाए जो उन्हें प्रभावी शांति निर्माता बना सके। इनका परिचय हम चिंतन कौशल, सम्प्रेषण कौशल और वैयक्तिक कौशल के तहत संक्षिप्त जानकारी के रूप में दे सकते हैं–

fpru dk'ky

vkykspukRed fpru& तथ्य विचार और आस्था में भेद करने की योग्यता, भेदभाव और पूर्वाग्रह को पहचानना। तर्क या बहस में निहित पूर्व सूचना एवं विषयों और समस्याओं को पहचानना। सही ढंग से तर्क करना।

lpuk icU/k& परिकल्पना को आकार देने एवं जाँच की क्षमता होना। हल कहाँ से मिल सकते है और सूचना को कैसे स्वीकार और अस्वीकार किया जाता है यह जानकारी भी रखना; प्रभावी ढंग से साक्ष्यों को आँकना; सर्वाधिक उचित कार्यवाही के लिए सक्षम होने हेतु सम्भावित परिणामों को ऑकने की समझ होना।

jpukRed fpru& नूतन समाधान और हल तलाशना, पार्श्विकता से सोचना और समस्याओं को कई परिप्रेक्ष्यों में देखना।

çfrfcac& समस्या से अलग रहना और उसके मुख्य हिस्सों को समझना; चिंतन प्रक्रिया पर कड़ी नजर रखना और किसी भी समस्या विशेष से निपटने के लिए रणनीति तैयार करना।

}U}kRed fpru& एक से अधिक दृष्टिकोण से सोचना; दोनों दृष्टिकोणों को समझना; दूसरे के ज्ञान के आधार पर किसी भी बिन्दु से तर्क देने में सक्षम होना।

lEçs"k.k dk'ky

çLrqrhdj.k& विचारों को सुस्प्ष्ट और संगतिपूर्ण ढंग से व्याख्यायित करने में सक्षम होना।

lfØ; Jo.krk& अन्य के विचारों को ध्यानपूर्वक सुनना, समझना और पहचानना।

le>kSrkokrk& संघर्ष पर विराम लगाने के लिए समझौते की एक उपकरण के रूप में भूमिका और सीमाओं को पहचानना; विवाद हल करने की दिशा में सार्थक संवाद की दिशा में कदम बढ़ाना।

ed lEizs"k.k& बॉडी लैंग्वेज के अर्थ और महत्व को पहचानना।

O;fDrd dk'ky

lg;ksx& साझे उद्देश्य के लिए दूसरों के साथ मिलकर प्रभावी ढंग से काम करना।

vudqyu'khyrk& तर्क और साक्ष्य की रोशनी में विचार बदलने के लिए इच्छुक होना।

vkRekuq'kklu& अपने आचरण को उचित बनाए रखने के लिए और प्रभावकारी ढंग से समय का प्रबन्धन करने की योग्यता।

mRrjnkf;Ro& काम का बीड़ा उठाने और उसे ठीक ढंग से पूरा करने की योग्यता, अपने हिस्से के दायित्व का निर्वाह करने को तैयार रहना।

lEeku& दूसरों को ध्यान से सुनना, निष्पक्षता और समानता के आधार पर निर्णय लेना, इस बात को पहचानना कि दूसरों की आस्था, विचार और दृष्टिकोण आपसे अलग हो सकते हैं।

'kkfUr vfHkof̀Rr;k¡

व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण पक्ष उसकी अभिवृत्तियाँ है। अभिवृत्ति वास्तव में एक मनो सामाजिक प्रत्यय है जो विभिन्न परिस्थितियों में व्यक्ति के द्वारा किए जाने वाले व्यवहार की प्रवृत्ति को बताता है। विभिन्न वस्तुओं, व्यक्तियों, संस्थाओं, स्थितियों क्रियाकलापों, योजनाओं आदि के प्रति व्यक्ति विशेष के विचार व पूर्वधारणाएँ पाएं ही उस व्यक्ति की अभिवृत्तियों का निर्धारण करते है। अभिवृत्ति धनात्मक/सकारात्मक भी हो सकती है तथा ऋणात्मक भी। अभिवृत्ति अनुभवों द्वारा विकसित होती है। अभिवृत्ति के विकास में प्रत्यक्षीकरण तथा संवेगात्मक कारकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

शिक्षा के द्वारा 'शांति अभिवृत्ति', शांत अभिवृत्ति परक प्रवृत्ति/दृष्टिकोण, को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता पर जोर दिया जाना चाहिए। प्यार, सच्चाई, देखभाल एवं उत्तरदायित्व का भाव, अंहिसा, विनम्रता, सेवाभाव, नेतृत्व, आत्मनियन्त्रण, परिश्रम, दूसरों के प्रति संवेदनशीलता आदि शान्ति के लिए अभिवृत्तिपरक व्यक्तित्व निर्माण के लिए आवश्यक मूल्य है। इसके अलावा शिक्षा के माध्यम से विद्यालयी स्तर पर विद्यार्थियों में निम्नलिखित अभिवृत्तियों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए–

- सहनशीलता
- मानव प्रतिष्ठा और मतभेद के लिए आदर
- लिंग और जाति संवेदनशीलता
- पर्यावरणीय जागरूकता
- देखभाल और सहानुभूति
- निष्पक्ष निर्णय लेना
- सामाजिक जिम्मेदारी एवं जबाबदेही
- आत्मसम्मान
- बदलाव की ओर रूझान (बदलाव के लिए तत्परता)

O;fDrRo ,oa lkekftd fodkl

व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी भी है और समाज की इकाई भी। जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त वह समाज में रहता है। अतः समाज का, समाज की संरचना का और समाज के लोगों का उस पर या

उसके व्यक्तित्व विकास पर प्रभाव पड़ता है। जन्म के तुरन्त बाद शिशु न तो सामाजिक होता है और न असामाजिक। बाद की परिस्थितियों के अनुसार उसमें सामाजिक या असामाजिक व्यवहार विकसित होता है। जब सामाजिक परिस्थिति इस प्रकार की होती है कि शिशु समाज के नियमों तथा नैतिक मानकों को आसानी से सीख लेता है तो यह कहा जाता है कि व्यक्तित्व के सामाजिक पक्ष या पहलू का विकास सम्यक् ढंग से हुआ है। दूसरी तरफ यदि परिस्थिति ऐसी होती है जिससे बालक समाज के नियमों को ठीक ढंग से नहीं सीख पाया तो हम कहते है कि उसमें सामाजिक विकास पूरा नहीं हुआ है अर्थात् उसका सामाजीकरण अधूरा हैं संक्षेप में व्यक्तित्व के सामाजिक विकास के अन्तर्गत तीन प्रक्रियाओं का होना अनिवार्य है–

- बालकों द्वारा सामाजिक रूप से अनुमोदित व्यवहार करना सीखना।
- अनुमोदित सामाजिक भूमिका करना।
- सामाजिक मनोवृत्ति का विकास।

आमतौर पर जीवन के प्रथम 6 साल में ही बच्चों के व्यक्तित्व में सामाजिक या असामाजिक व्यवहार की नींव पड़ती है। इसलिए प्रारम्भिक सामाजिक अनुभूतियों द्वारा ही यह सुनिश्चित हो पाता है कि आगे चलकर बालक का व्यक्तित्व कैसा होगा तथा अपने परिवेश में वह सामाजिक व्यवहार अधिक करेगा या असमाजिक व्यवहार।

बालकों में प्रारम्भिक सामाजिक अनुभूतियां मूलतः दो तरह की परिस्थितियों में उत्पन्न होती है– घरेलू परिस्थिति में तथा घर से बाहर जैसे स्कूल, पास–पड़ोस की परिस्थितियों में। घरेलू परिस्थिति में बालक माता–पिता भाई–बहन परिवार के अन्य सदस्यों के साथ अन्तःक्रिया करके विशेष सामाजिक अनुभूतियाँ प्राप्त करता है जिससे उसके द्वारा की जाने वाली अन्तःक्रियाओं का निर्धारण होता है। यदि बालक को मिलने वाली अनुभूतियाँ आनन्ददायक होती है तथा उसमें सन्तोष उत्पन्न करती है तो बालक दूसरों के साथ स्वस्थ्य अन्तःक्रिया करते है तथा इनका सामाजिक समायोजन काफी अच्छा होता है। इसके विपरीत यदि बालक को समुचित स्नेह व संरक्षण प्राप्त नहीं होता है तो उसमें नकारात्मकता का भाव व्याप्त हो जाता है।

स्पष्ट है कि व्यक्तित्व के सामाजिक विकास से तात्पर्य उस प्रक्रिया पक्ष से है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने सामाजिक वातावरण के साथ अनुकूलन स्थापित करता है, सामाजिक परिस्थितियों के अनुरुप अपनी आवश्यकताओं व रूचियों पर नियन्त्रण करता है, दूसरों के प्रति अपने उत्तरदायित्व का अनुभव करता है तथा अन्य व्यक्तियों के साथ प्रभावपूर्ण ढंग से सामाजिक संबंध स्थापित करता है। सामाजिक विकास के फलस्वरूप व्यक्ति समाज का एक मान्य सहयोगी, उपयोगी तथा कुशल नागरिक बन जाता है। घर परिवार, पड़ोस, मित्र मंडली, विद्यालय, समुदाय, जनसंचार साधन तथा राजनीतिक व सामाजिक संस्थाएं बालक के सामाजिक विकास में, सामाजीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सामाजिक विकास मानव जीवन का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष है। सामाजिक वातावरण निरन्तर परिवर्तनशील रहता है तथा व्यक्ति को अपने सामाजिक वातावरण में

होने वाले परिवर्तनों के अनुरूप बदलना होता है। दूसरों से सहयोग करना, अन्यों के अनुरूप व्यवहार करना, शिष्टता का आचरण एवं सआस्तित्व को स्वीकारना आदि सामाजिक परिपक्वता के लक्षण होते है। बालक के सामाजिक वातावरण को नियन्त्रित करके उन्हें वाछिंत दिशा में सामाजिक विकास के लिए प्रेरित किया जा सकता है। शिक्षा इस कार्य में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है। सामाजिक अन्तर्क्रिया के फलस्वरूप व्यक्ति समाज के आदर्शों, मूल्यों तथा विश्वासों में आस्था रखना सीखता है एवं समाज हित में अपने निहित स्वार्थों को त्याग करने के लिए तत्पर रहता है। शिक्षा के द्वारा बच्चों के सामाजिक विकास को वांछित दिशा तथा गति दी जा सकती है।

0;fDrRo dk vFkZ ,oa Lo:i

सामान्य अर्थों में व्यक्तित्व से तात्पर्य शारीरिक गठन, रंगरूप, वेषभूषा, बातचीत के ढंग तथा कार्यव्यवहार जैसे विभिन्न गुणों के समायोजन से लगाया जाता है। व्यक्तित्व शब्द के अंग्रेजी पर्याय पर्सनालिटी का शाब्दिक अर्थ व्यक्ति के वाह्य गुणों या वाह्य आचरण को इंगित करता है। वस्तुतः Personality शब्द लैटिन भाषा के शब्द पर्सोना (Persona) से बना है, जिसका अर्थ नकाब/मुखौटा है। पर्सोना शब्द का अभिप्राय उस पहनावे या वेषभूषा से था, जिसे पहनकर नाटक के पात्र रंगमंच पर किसी अन्य व्यक्ति का अभिनय करते थे। अतः पर्सनालिटी शब्द का शाब्दिक अर्थ व्यक्ति के वाह्य दिखावे मात्र को इंगित करता है। व्यक्तित्व शब्द का यह अर्थ निश्चय ही एक संकुचित अर्थ है।

vkyiksVZ ds vuqlkj& '' व्यक्तित्व व्यक्ति के भीतर उन मनोशारीरिक गुणों का गतिशील/गत्यात्मक संगठन है, जो वातावरण के साथ उसका अपूर्व समायोजन निर्धारित करते है।'' आलपोर्ट द्वारा प्रस्तुत यह परिभाषा व्यक्तित्व के सम्बन्ध में तीन बातों की ओर संकेत करती है–

- व्यक्तित्व की प्रकृति संगठनात्मक तथा गत्यात्मक है।
- व्यक्तित्व में मनो तथा शारीरिक दोनों प्रकार के गुण समाहित रहते है।
- व्यक्तित्व वातावरण के साथ समायोजन से अभिलक्षित होता है।

vkbtsud ds vuqlkj& व्यक्तिगत व्यक्ति के चरित्र, चित्र, प्रकृति, ज्ञानशक्ति तथा शरीर गठन का करीब–करीब एक स्थायी एवं टिकाऊ संगठन है जो वातावरण में उसके अपूर्व समायोजन का निर्धारण करता है।

स्पष्ट है कि वातावरण के साथ व्यक्ति का समायोजन स्थापित करने में उसका व्यक्तित्व महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। वास्तव में वातावरण के साथ समायोजन स्थापित करने के दौरान ही व्यक्ति के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति होती है। प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तित्व के अनुरूप वातावरण के साथ एक अनूठे ढंग से समायोजन करता है। समायोजन का यह अनूठा ढंग ही उस व्यक्ति के व्यक्तित्व का परिचायक होता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि व्यक्तित्व व्यक्ति के व्यवहारों एवं विचारों को क्रियाशील बनाता है एवं निर्देशित करता है।

आगेचलकर आलपोर्ट ने भी अपनी व्यक्तित्व सम्बन्धी परिभाषा में संशोधन करते हुए कहा कि व्यक्तित्व केवल वातावरण के साथ समायोजन ही निर्धारित नहीं करता वरन् व्यक्ति की पहचान बताने वाले उसके विशिष्ट व्यवहार एवं विचारों का भी निर्धारण करता है।

0;fDrRo dk fodkl rFkk fu/kkj.k

मनोविज्ञान में विकास शब्द का प्रयोग वृद्धि के फलस्वरूप शरीर के समस्त अंगों में आए परिवर्तनों के संगठन से है। निःसन्देह विकास में वृद्धि का भाव सदैव निहित रहता है, परन्तु यह वृद्धि से अधिक व्यापक तथा एकीकृत होता है। विकास शरीर के विभिन्न अंगों की कार्यक्षमता को इंगित करता है। यह वह प्रक्रिया है जिसमें विभिन्न आन्तरिक शरीर रचना सम्बन्धी परिवर्तन तथा इनसे उत्पन्न मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएं एकीकृत होकर व्यक्ति को सरलता, सहजता, व मितव्ययिता से कार्य करने के योग्य बनाती है। विकास के परिणामस्वरूप व्यक्ति में नवीन कार्यक्षमताएँ प्रकट होती है। जहाँ तक व्यक्तित्व विकास का प्रश्न है, इससे तात्पर्य व्यक्तित्व पैटर्न के विकास से होता है। व्यक्तित्व पैटर्न में सभी मनोदैहिक तंत्र जिनसे व्यक्ति का व्यक्तित्व बना होता है, आपस में अर्न्तसम्बंधित होते है और एक दूसरे को प्रभावित करते रहते है। व्यक्तित्व पैटर्न के दो मुख्य तत्व है– आत्मसम्प्रत्यय (Self concept) तथा शीलगुण (trait) व्यक्तित्व विकास से तात्पर्य इन दोनों तत्वों में होने वाले विकासात्मक परिवर्तन से होता है। आत्मसम्प्रत्यय या स्व से तात्पर्य है कि व्यक्ति स्वयं के विषय में जो सोचता है तथा अपने बारे में जो अवधारणा विकसित करता है। यह दो रूपों में हो सकता है– वास्तविक स्व तथा आदर्शात्मक स्व। वास्तविक स्व से तात्पर्य है कि व्यक्ति अपने बारे में क्या सोचता है या प्रत्यक्षीकृत करता है जैसे वह कौन है? उसमें कौन–कौन सी विशेषताएं है ? आदि। आदर्शात्मक स्व से तात्पर्य है वह कैसा होना चाहता है? तथा आगे चलकर क्या बनना चाहता है? इस प्रकार स्व के दोनों रूपों में से प्रत्येक का सम्बन्ध शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक पहलू से होता है। इसी प्रकार व्यक्तित्व का संरचना अनेक शीलगुणों से मिलकर बनी होती है। यद्यपि इनका विकास अधिगम तथा अनुभूतियों पर निर्भर करता है। सभी प्रकार के व्यक्तियों के व्यवहार में अलग–अलग शीलगुणों का स्थायित्व प्रदर्शित होता है जिसके आधार पर उनके व्यवहार की व्याख्या की जाती है।

व्यक्तित्व के अर्थ एवं स्वरूप को स्पष्ट करने के उपरान्त यह आवश्यक एवं तर्कसंगत प्रतीत होता है कि व्यक्तित्व के विकास एवं निर्धारण को समझा जाए। व्यक्तित्व के विकास में वंशानुक्रम तथा परिवेश दो प्रधान तत्व है। वंशानुक्रम व्यक्ति/बालक को जन्मजात शक्तियाँ प्रदान करता है तथा परिवेश उसे इन शक्तियों को विकसित करने के लिए सुविधाएँ प्रदान करता है। व्यक्तित्व को प्रभावित करने में कुछ विशेष तत्वों का हाथ रहता है जिन्हें हम व्यक्तित्व के निर्धारक कहते है। ये ही तत्व मिलकर व्यक्तित्व को पूर्ण बनाने में सहयोग देते है। इन्हीं तत्वों के अनुरूप व्यक्तित्व का विकास होता है। संक्षेप में व्यक्तित्व के निर्धारण में दो प्रमुख तत्वों का योगदान होता है–

1. जैविक कारक 2. वातावरणीय कारक

इन दोनों प्रकार के कारकों की परस्पर अन्तर्क्रिया के फलस्वरूप व्यक्तित्व का विकास होता है।

vknr

व्यक्ति अपने चिंतन के आधार पर कर्म करता है। व्यक्ति जैसा सोचता है और करता है वह वैसा ही बन जाता है। अर्थात् लम्बे समय तक किया जाने वाला कार्य 'आदत' के रूप में स्थापित हो जाता है। आदतें अच्छी भी हो सकती है और बुरी भी हो सकती है। यह व्यक्ति पर निर्भर करता है कि वह कैसी आदतें बनाना चाहता है। आदत हमारे व्यक्तित्व की पहचान कराती है। ऐसी आदतें जो हमारे विकास में बाधक हो, तथा जिससे दूसरी को परेशानी हो, उन्हें व्यक्तित्व का स्थायी अंग बनाने से बचना चाहिए। जैसे दूसरों को सम्मान न देना, गाली देना, बात—बात में झगड़ा करना आदि ये आदतें हमारे व्यक्तित्व को निखारने में बाधक है। हमें सदैव अच्छी आदतों को ही अपने व्यक्तित्व का स्थायी अंग बनाना चाहिए।

LoHkko

कोई आदत जब जीवन का या मानव व्यक्तित्व का अंग बन जाता है तो वह हमारे स्वभाव के रूप में परिणित हो जाता है जैसे किसी व्यक्ति की बोली कर्कश व व्यवहार रूखा होता है, तो कुछ की बोली मधुर एवं व्यवहार विनम्र होता है। यह उनका स्वभाव है। इस प्रकार व्यक्ति के व्यवहार से उसका स्वभाव पता चलता है। यदि हमें अपने व्यक्तित्व को अच्छा बनाना है तो शालीन, शिष्ट, एवं मधुर व्यवहार को अपने स्वभाव का अंग बनाना चाहिए।

Lotkx:drk

संगठित व्यक्तित्व की प्रधान विशेषता स्वजागरूकता या आत्मचेतना है। इसी विशेषता के कारण मानव को अन्य प्राणियों में सर्वोच्च स्थान मिला है। स्वजागरूकता के कारण ही व्यक्ति को अपने स्व का ध्यान रहता है। इसी चेतना के कारण उसे समाज में अपनी स्थिति का ज्ञान होता है। आत्मचेतना या स्वजागरूकता उसे समाज के प्रति कर्त्तव्यपालन के लिए सजग करती है।

0;fDrRo fodkl e: okrkoj.k dk i:Hkko

प्राणियों के विकास एवं व्यवहार पर दो प्रमुख कारकों का प्रभाव पड़ता है वंशानुक्रम तथा वातावरण का। वंशानुक्रम जहाँ जन्मजात व प्रकृतिजन्य होता है वही वातावरण अर्जित व पोषण आधारित होता है। वस्तुतः व्यक्ति के व्यक्तित्व पर इन दोनों का प्रभाव पड़ता है।

वातावरण के लिए पर्यावरण शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। साधारण बोलचाल की भाषा में वातावरण का तात्पर्य व्यक्ति के आस—पास चारों तरफ उपस्थित परिस्थितियों से है। पर्यावरण शब्द के संधि विच्छेद से भी स्पष्ट है कि यह शब्द परि+आवरण से मिलकर बना है। परि शब्द का अर्थ है चारों ओर तथा आवरण शब्द का अर्थ है चारों ओर से ढकने वाला। अतः किसी भी व्यक्ति के चारों ओर जो कुछ भी है वह उसका पर्यावरण है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से पर्यावरण के अन्तर्गत वे सभी बातें आ जाती है जो मानव के जीवन तथा उसके व्यक्तित्व को प्रभावित करती है। वातावरण का विस्तार असीमित

होता है तथा इसके अन्तर्गत वे सभी परिस्थितियाँ आ जाती है जो प्राणी को किसी भी रूप में प्रभावित करती है। वातावरण को दो भागों में बाँटा जा सकता है। 1. आन्तरिक पर्यावरण, 2. वाह्य वातावरण आन्तरिक वातावरण से तात्पर्य व्यक्ति के शरीर के भीतर विद्यमान परिस्थितियों से है जबकि वाह्य वातावरण से तात्पर्य घर, परिवार, समाज में उपलब्ध विभिन्न परिस्थितियों से होता है। वाह्य वातावरण को पुनः भौतिक वातावरण, सामाजिक वातावरण, आर्थिक वातावरण, सांस्कृतिक वातावरण आदि भागों में बाँटा जा सकता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास में वातावरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। व्यक्तित्व विकास के प्रत्येक पक्ष या पहलू पर उसके भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक वातावरण का व्यापक प्रभाव पड़ता है। बालक का वातावरण गर्भावस्था के दौरान से ही उसके विकास को प्रभावित करने लगता है। माँ के द्वारा ली गई खुराक, मादक द्रव्य, किया गया श्रम तथा माँ की संवेगात्मक स्थिति का गर्भस्थ शिशु पर जो प्रभाव पड़ता है वह आने वाले वर्षों में भी बना रहता है। संक्षेप में व्यक्तित्व पर वातावरण सम्बन्धी निम्नलिखित कारकों का प्रभाव पड़ता है।

ifjokj

परिवार के विभिन्न सदस्यों के व्यक्तित्व तथा उनकी परस्पर अन्तर्क्रिया का बालक के व्यकितत्व पर जन्म से ही प्रभाव पड़ना प्रारम्भ हो जाता है। बालक जन्म से ही एक सामाजिक प्राणी होता है तथा सबसे पहले वह परिवारजनों के सम्पर्क में आता है। इसलिए परिवारिक पृष्ठभूमि का उसके व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ना स्वभाविक ही है। परिवार के लोगों द्वारा की जाने वाली क्रियाओं जैसे लाड–दुलार ईर्ष्या द्वेष, तिरस्कार आदि का प्रभाव बालक पर पड़ता है। परिवार में कलह होने या परिवार की संघर्षपूर्ण जीवन शैली तथा परिवारजनों की प्रवृत्तियाँ, महत्वाकाँक्षा, रूचि, दृष्टिकोण, क्षमता तथा आर्थिक सामाजिक व शैक्षिक स्थिति आदि भी बालक के व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

ikl&iMkl

जैसे–जैसे बालक का विकास होता है उसका सामाजिक दायरा बढ़ता है तथा उनका प्रभाव बालक के व्यक्तित्व पर पड़ता है। सामाजिक अनुकरण के द्वारा वह अनेक बातें सीखता है। सार्थियों के साथ खेल–खेल में बालक अनुशासन, आत्मविश्वास, नेतृत्व, वाक्कौशल, सामाजिकता जैसे अनेक गुण सीखता है।

vkfFkd fLFkfr

परिवार की आर्थिक स्थिति का भी बालक के व्यक्तित्व के विकास पर प्रभाव पड़ता है। प्रायः आर्थिक दृष्टि से कमजोर परिवार के बच्चों में हीन भावना तथा भग्राशा इत्यदि उत्पन्न हो जाती है।

fo|ky;

विद्यालय को व्यक्तित्व विकास का एक औपचारिक केन्द्र माना जाता है। विद्यालय में बालक द्वारा प्राप्त शैक्षिक तथा अन्य अनुभव व्यक्तित्व के विकास में सार्थक भूमिका अदा करते है। विद्यालय में

छात्रों/छात्राओं को अपना शैक्षिक, नैतिक, सामाजिक, शारीरिक, बौद्धिक, संवेगात्मक तथा मानसिक/विकास करने के अवसर प्रदान किए जाते हैं।

tulapkj ek/;e

वर्तमान समय में जनसंचार साधनों की भूमिका भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। रेडियो, दूरदर्शन, पत्रिकाएँ, समाचारपत्र, इण्टरनेट आदि जनसंचार के साधन जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित कर रहे हैं। मानव व्यक्तित्व भी इनके प्रभाव से अछूता नहीं है। जनसंचार के विभिन्न साधन मानव व्यक्तित्व को प्रायः अपरोक्ष रूप से किन्तु काफी अधिक प्रभावित करते हैं।

0;fDrRo d: ikp cM: 'khy x|.k

व्यक्तित्व के शीलगुण सिद्धान्त के अनुसार व्यक्तित्व की संरचना भिन्न–भिन्न प्रकार के अनेक शीलगुणों से मिलकर बनी होती है। शीलगुण से तात्पर्य व्यक्ति के व्यवहार का वर्णन करने वाली उन संज्ञाओं से है जो व्यवहार के संगत एवं अपेक्षाकृत स्थायी रूप को अभिव्यक्त करती है जैसे ईमानदारी, कर्त्तव्यनिष्ठा, सहयोग, परोपकार, सत्य बोलना आदि शीलगुण है। स्पष्ट है कि शीलगुण परस्पर एक दूसरे से भिन्न होते है। ये शीलगुण भिन्न–भिन्न मात्रा में व्यक्ति में विद्यमान होते है एवं इनके आधार पर व्यक्ति के व्यवहार की व्याख्या की जा सकती है। वस्तुतः शीलगुण उपागम के अन्तर्गत शीलगुण को व्यक्तित्व की मौलिक ईकाई माना जाता है। शीलगुण सिद्धान्त वास्तव में व्यक्तित्व की उन महत्वपूर्ण विमाओं को प्रस्तुत करता है जो परस्पर स्वतन्त्र हैं तथा जिनके आधार पर व्यक्तियों में भेद किए जा सकते है। यहाँ एक प्रश्न उभरकर सामने आता है कि, मानव व्यक्तित्व के प्रमुख शीलगुण या विमा कौन–कौन से है? गत दो दशकों में किए गए महत्वपूर्ण शोधों के आधार पर मनोवैज्ञानिकों ने इस सम्बन्ध में कुछ खास विमाओं/शीलगुणों के बारे में विचार व्यक्त किए है। ऐसे प्रमुख शोधकर्ता हैं– कोस्टा एवं मैकक्रके (1989), होगान (1987), नौलर, ला एवं कोमरे (1987)। इन शोधकर्ताओं के बीच इस बात की सहमति है कि व्यक्तित्व के निम्नलिखित 5 प्रमुख गुण है। सभी द्विधुवीय है–

vuHkfr;k dk [kykiu

इस विमा में कभी–कभी व्यक्ति एक तरफ काफी संवेदनशील, काल्पनिक, बौद्धिक, सभ्य एवं शिष्ट आदि व्यवहार से सम्बन्धित शीलगुण दिखाता है तो दूसरी तरफ वह काफी असंवेदनशील, रूखा, संकीर्ण, असभ्य एवं अशिष्ट व्यवहारों से सम्बन्धित शीलगुण भी दिखाता है।

p:rU;rk

इस विमा के अन्तर्गत एक परिस्थिति में व्यक्ति आत्मअनुशासित, उत्तरदायी, सावधान एवं काफी सोच विचार कर व्यवहार करने से सम्बद्ध शीलगुण दिखाता है तो दूसरी परिस्थिति में वही व्यक्ति बिना सोचे समझे, असावधानीपूर्वक, कमजोर, या आधे मन से व्यवहार करने से सम्बद्ध शीलगुण दिखाता है।

cfge[krk

व्यक्तित्व की इस विमा के अन्तर्गत एक परिस्थिति में व्यक्ति सामाजिक, मजाकिया, स्नेहपूर्ण, वातूनी, आदि शीलगुण दिखाता है तो दूसरी परिस्थिति में वह संयमी, गंभीर, रूखापन, शांत, सचेत रहने आदि का शीलगुण भी प्रदर्शित करता है।

lgefrtU;rk

इस विमा के अनुसार एक परिस्थिति में व्यक्ति सहयोगी, दूसरों पर विश्वास करने वाला, उदार, सीधा–सादा, उत्तम प्रकृति आदि से सम्बन्धित व्यवहार दिखाता है तो दूसरी परिस्थिति में वह असहयोगी, शंकालु, चिड़चिड़ा, जिद्दी, बेरहम आदि बन कर भी व्यवहार करता पाया जाता है।

Luk;qfoØfr

इस विमा में व्यक्ति एक ओर कभी–कभी तो सांवेगिक रूप से काफी शांत, संतुलित, रोगभ्रमी विचारों से अपने आप को मुक्त पाता है तो दूसरी ओर वह कभी–कभी अपने आप को सांवेगिक रूप से काफी उत्तेजित, असन्तुलित, तथा रोगभ्रमी विचारों से घिरा हुआ पाता है।

व्यक्तित्व के उक्त पाँच बड़े शीलगुणों के प्रकारों पर गोल्डबर्ग ने एक सामान्य परिकल्पना प्रस्तुत की जिसके अनुसार किसी भी संस्कृति के व्यक्तियों के व्यक्तित्व की व्याख्या इन पाँच बड़े शीलगुणों के आधार पर की जा सकती है।

O;fDrRo dh lkekftdrk vkj 'kkfUr

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसके जीवन का प्रारम्भ समाज में ही होता है तथा जीवनपर्यन्त समाज में रहकर ही वह अपने जीवन की विभिन्न गतिविधियों को सम्पादित करता रहता है। ऐसी स्थिति में मानव समाज के सदस्यों में परस्पर सहयोग तथा अन्तर्क्रिया का होना स्वाभाविक ही है। समाज के विभिन्न सदस्यों के बीच परस्पर होने वाली सामाजिक अन्तर्क्रिया के निम्नलिखित पाँच आधार हो सकते हैं–

- सहयोग
- प्रतिस्पर्धा
- संघर्ष
- व्यवस्था
- आत्मीकरण

सहयोग, प्रतिस्पर्धा, व्यवस्था, आत्मीकरण वस्तुतः सामाजिक अन्तर्क्रिया के सकारात्मक आधार है जिससे समूह का सामाजिक विकास होता है इसके विपरीत संघर्ष एक नकारात्मक आधार है जिसके परिणाम विघटनात्मक भी हो सकते है। वास्तव में वर्तमान समाज में व्याप्त असन्तोष तथा हिंसा के भाव को देखते हुए शांति शिक्षा को विद्यालय पाठ्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग बताते हुए इसमें सामाजिक न्याय, सहिष्णुता मानवीय गरिमा, सांस्कृतिक विविधता जैसे विषयों को शामिल करने की सिफारिश की जा रही है। आज औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा प्रक्रिया के अन्तर्गत हम भावनात्मकता की अनदेखी मानव

व्यक्तित्व के भाव पक्ष की उपेक्षा तथा संज्ञानात्मक पक्ष पर विशेष बल देते है। भौतिक तरक्की और मानवीय आधार में असन्तुलन वर्तमान में बढ़ती आसामाजिकता की प्रवृत्ति का मुख्य कारण है। अतः शांति शिक्षा के बालक के द्वारा बालक के व्यक्तित्व के निर्माण में विभन्न सामाजिक गुणों जैसे प्रेम, सहयोग, करूणा, मैत्री, सहिष्णुता आदि के द्वारा, वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना का विकास करें। साथ ही नैतिक मूल्यों के साथ–साथ उन मूल्यों और दृष्टिकोण के पोषण पर भी बल देता है जो प्रकृति और मानव जगत के बीच सामंजस्य स्थापित करने के लिए आवश्यक है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक डार्विन ने अस्तित्व के लिए 'जीवन संघर्ष' और 'योग्यतम की उत्तरजीविका' का सिद्धान्त दिया था। आज मानव जैसा सीमित बल का प्राणी किस प्रकार प्रकृति का सबसे शक्तिशाली प्राणी बन गया। क्या मानव के सर्वोच्च तथा शक्तिशाली प्राणी होने में केवल शरीर बल तथा बुद्धि बल का ही योगदान है। अगर ऐसा है तो मानव समाज में बच्चे बुद्ध अक्षम और अशक्त लोग किस प्रकार सुरक्षित और संरक्षित रहते है। इसका कारण है कि शरीर बल और बुद्धि बल के अलावा नीति बल और सामाजिक मर्यादा भी मानव सभ्यता का आधार है। सामाजिक और नैतिक जीवन मानवीय सभ्यता का अभिन्न अंग है जो वातावरण तथा शिक्षा एवं संस्कार से पुष्ट होता है। निष्कर्षतः हम कह सकते है कि हम सामाजिक जीवन प्रणाली का अभिन्न अंग है। मानव के लिए आत्मनिर्भर बनने की बात कही गई है लेकिन इसे स्वतः सम्पूर्ण समझने की गलती नहीं करनी चाहिए। हमें एक दूसरे की आवश्यकता है। परस्पर निर्भरता स्वावलम्बन का मानवीय चेहरा है। हम दूसरों से अपने को कैसे जोड़ते है और कैसा व्यवहार करते हैं, यही हमारे व्यक्तित्व को परिभाषित करता है। ऐसे में जरूरत है ऐसी शिक्षा की जो विद्यार्थियों में ऐसे मूल्य और कौशल के बीज बो सके जो उन्हें दूसरों के साथ मिलजुलकर रहना सिखाएँ।

vH;kl ç'u

1. शांति शिक्षा से आप क्या समझते है ? वर्तमान में इसकी क्या आवश्यकता है ?
2. व्यक्तित्व को परिभाषित करते हुए व्यक्तित्व विकास के प्रमुख निर्धारकों के विषय में लिखिए ?
3. व्यक्तित्व के पाँच बड़े शीलगुण कौन–कौन से है ?

सहपाठी के आन्तरिक सम्बंधों की समझ एवं आपसी सम्बंधों का विकास

सहपाठी के सम्बन्धों की समझ एवं आपसी सम्बन्धों का विकास तभी सम्भव हो पाता है, जब बच्चों के प्रति अभिभावक अपने दायित्वों का निर्वाहन उचित प्रकार से करते हैं, यथा–

- सामंजस्य की भावना विकसित करना।
- सुरक्षा की भावना विकसित करना।
- आत्म सम्मान बढ़ाना।
- बड़ों के प्रति आदर एवं सम्मान की भावना विकसित करना।
- विभिन्न विषयों पर खुलकर बातचीत करने योग्य बनाना।
- असफलता का अनुभव करने पर सही मार्गदर्शन करना।
- विपरीत परिस्थितियों में उचित निर्णय लेने की क्षमता विकसित करना।

e[; f'k{k.k fcUn

- बच्चों के विकास में उनके साथियों की भूमिका
- सामाजिक बोध
- साथी के सम्बंधों की विशेषता
- आक्रामकता
- तकनीकी एवं साथी सम्बंध
- साथी सम्बंध में विविधता एवं सामाजिक बोध
- स्वस्थ साथ–सम्बंधों को बढ़ावा

जब माता–पिता अपने दायित्वों का सही ढंग से निर्वहन करते हैं, जब निश्चित रूप से बच्चों के आपसी सम्बन्ध का विकास होता है, यथा–

- पढ़ाई पर ध्यान देना।
- माता–पिता एवं परिवार के साथ अधिक समय व्यतीत करना।
- बड़ों का आदर–सम्मान करना।
- विपरीत परिस्थितियों पर अपने क्रोध एवं आवेगों पर नियन्त्रण करना।
- घर से बाहर अकेले देर रात तक न घूमना।
- परिवार के सदस्यों से अपने मित्रों को मिलवाना।
- आपस में मिलजुलकर रहना तथा समय पर उनके प्रति जिम्मेदारी निभाना।
- अपनी विभिन्न समस्याओं एवं जिज्ञासाओं को माता–पिता एवं शिक्षक से मिल–जुलकर शान्त करना अथवा उनका निराकरण करना।
- सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाना।
- अच्छी पुस्तकों/साहित्य का अध्ययन करना।
- सांस्कृतिक क्रियाकलापों में भाग लेना।

आपसी सम्बंधों को स्वस्थ्य बनाए रखने हेतु अपनाने योग्य जीवन कौशल क्या–क्या हैं?

vkb, tkus&

1- Lo;a dk ifr tkx:d gksuk&

स्वयं के प्रति जागरूक होने पर हम प्रायः सकारात्मक ढंग से विचार करते हैं।

2- Lo;a dks fo"ke ifjfLFkfr esa j[kdj lkspuk&

जब हम स्वयं को विषम परिस्थिति में रखते हैं, तो उस पर गम्भीरता से विचार करते हैं।

3- jpukRed lkp&

रचनात्मक सोच, सकारात्मक विचार एवं क्रियाकलाप को जन्म देती है।

4- lekykspukRed lkp

विषम परिस्थितियों में स्वयं के प्रति जागरूकता ही, सही एवं गलत परिणाम में अन्तर करना सिखाती है।

5- ruko ls yM+uk

विषम परिस्थिति में तनाव होना स्वाभाविक है, परन्तु उचित निर्णय द्वारा तनाव दूर होता है।

6- lgh fu.kZ; ysuk

सही निर्णय लेकर हम अपने तनाव को दूर करते हैं तथा हमारी समस्याएं भी सुलझती हैं।

7- ijLij LoLFk 0;ogkj

आपसी सम्बंधों को परस्पर स्वस्थ व्यवहार सही दिशा की ओर उन्मुख करता है।

8- Hkkoukvksa ij fu;a=.k

भावनाओं पर नियंत्रण रखने पर हम सही निर्णय ले पाते हैं।

9- çHkkoh lEisz"k.k

आपसी व्यवहार स्वस्थ एवं अच्छा रखने में प्रभावी सम्प्रेषण अर्थात् अपनी बात को अच्छे प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करने पर सम्बन्ध स्वस्थ्य एवं विकास की ओर बढ़ते हैं।

10 leL;k lek/kku djuk

समस्या समाधान करने की कुशलता जीवन को खुशहाल एवं स्वस्थ बनाती है।

pfj= ,oa uSfrd f'k{kk] lekt vuqdwy fodkl

नैतिक विकास का मतलब इस तरह के आदेश देना नहीं है कि 'यह करो' और 'यह न करो', वरन् इसके माध्यम से विद्यार्थी यह सीख सकते हैं कि सही क्या है, दया क्या है और व्यक्तिगत और सामाजिक मूल्यों के सन्दर्भों में साझे हित में क्या उचित है।

बच्चे जो भी सुनते हैं उसमें से अधिकतर चीजों को समझ पाते हैं, परन्तु अक्सर कथनी और करनी में जो अन्तर होता है उस विरोधाभास से सामंजस्य नहीं बिठा पाते। यहाँ तक कि परिवार में हुआ छोटा–सा विवाद भी बच्चों पर गहरा प्रभाव डाल सकता है। बड़ों के लगातार विवाद और माता–पिता के टूटते सम्बंध भय और विषाद का कारण बनते हैं जो थोड़े समय बाद किशोरावस्था में हिंसा के रूप में प्रकट होते हैं। अतः अकादमिक उद्देश्यों से भी माता–पिता और शिक्षकों को साथ लाने की जरूरत है। यह भी मानना है कि व्यक्तिगत नैतिकता का विकास केवल माता–पिता अथवा केवल विद्यालय पर नहीं छोड़ा जा सकता।

विभिन्न आयु समूहों के लिए नैतिक विकास अलग–अलग तरह से होता है। आरम्भिक वर्षों में विद्यार्थी अपने आस–पास को समझने और उसके तथा अपने सम्बंध में चेतना के विकास में लगे रहते हैं। उनका व्यवहार सजा से बचने और पुरस्कार पाने के प्रति होता है। वे अच्छे–बुरे का अंदाजा इसी से लगाते हैं कि कौन सी बात मानी गई, कौन सी नहीं। इस स्तर पर वे बड़ों में जो देखते हैं, उसी के अनुरूप नैतिक मूल्यों की अपनी समझ बनाते हैं। जैसे–जैसे बच्चे बड़े होते हैं, उनकी तार्किक क्षमताओं का तो विकास काफी हद तक होता है। परन्तु वे इतने परिपक्व नहीं हो पाते हैं कि मान्यताओं और मानकों पर प्रश्न खड़ें कर सकें। दूसरों को प्रभावित करने और स्वयं को मजबूत सिद्ध करने के क्रम में वे कानून तोड़ते हैं। इस चरण में नियमों, प्रतिबन्धों, दायित्वों और शिष्टताओं की समीक्षा कर चिन्तन को बढ़ावा देते हुए सामूहिक अच्छाई, त्याग, दया और संयम के मूल्यों के प्रति एक अंतदृष्टि विकसित की जा सकती है। यह बातचीत और चर्चा के द्वारा हो सकता है। ऐसे प्रयास उन्हें अपने नैतिक आचरण गढ़ने में सहायता करते हैं। बाद में, जब उनमें अमूर्त चिन्तन का पूरी तरह विकास हो जाता है, तब वह तार्किक ढंग से बता पाते हैं कि नैतिक आचरण क्या होता है।

हमारे पुराने एवं अच्छे शिक्षकों ने संस्मरणों और कहानियों के माध्यम से आध्यात्मिक शिक्षा और सामाजिक संदेश देने को सबसे अच्छा तरीका माना था। इसके साथ ही यह सार्वभौमिक सत्य है कि चाहे बच्चा कितना ही मंदबृद्धि हो, उसके पास कक्षा में बाँटने के लिए कुछ न कुछ अवश्य होता है। अतः शिक्षकों को उसकी उस प्रतिभा और आत्म विश्वास के विकास में योग देना चाहिए।

नैतिक शिक्षा और आचरण, व्यक्तिगत, सामाजिक, सामुदायिक और वैश्विक आयामों से जोड़कर सिखाए जा सकते हैं। मूल्यों की शिक्षा का मतलब हमेशा से वांछनीय व्यवहार को प्रेरित करना रहा है।

cPpk d pfj= fuek.k e ekrk&firk rFkk ifjokj d lnL;k dk ;kxnku

vkb, tku&

परिवार, माता–पिता एवं शिक्षक हमें कौन–कौन से नैतिक/मानवीय मूल्य सिखाते हैं–

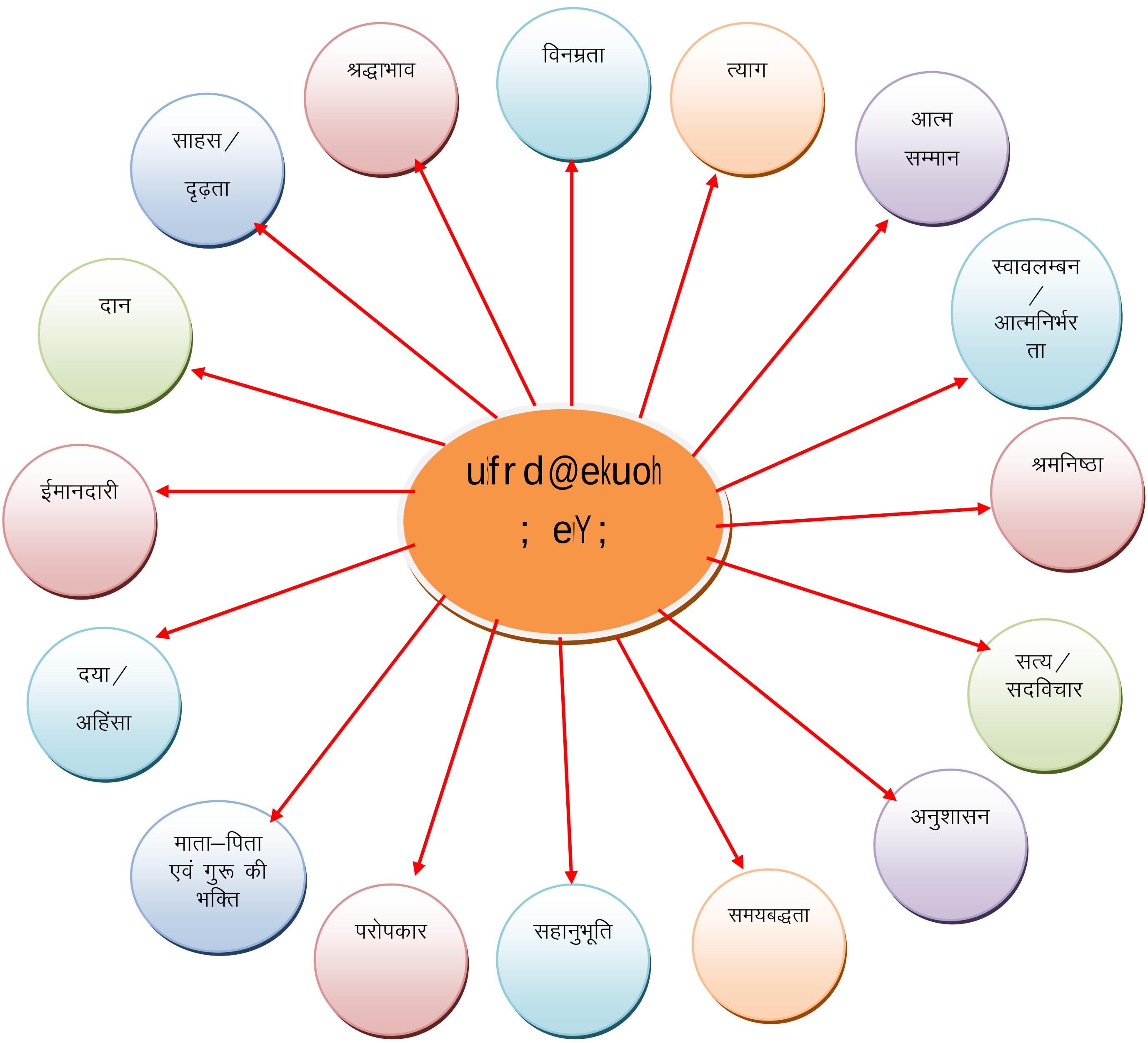

fopkj dfj,&ufrd@ekuoh; eY;k dk gekj fy, D;k egRo g \

अन्ततः वास्तव में व्यक्तित्व विकास एवं चरित्र निर्माण में नैतिक/मानवीय मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इन्हें अपने माता–पिता, परिवार एवं शिक्षक के माध्यम से अपनाकर हम अपने जीवन में निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति कर सकते हैं। यदि उपरोक्त नैतिक/मानवीय मूल्यों हमारे भीतर आ जाते हैं तो निश्चित रूप से राष्ट्र एवं समाज के प्रति अपने दायित्वों का निर्वाहन करने में हम सक्षम हो सकते हैं।

'kkfr fuekrk d :i e d'ky f'k{kd dk egRo

बच्चों के लिए शिक्षक आदर्श होते हैं। कहा जाता है– ^^tk e tkurk g ogh i<krk g vkj tk e g ogh fl[kkrk gA**

अतः शिक्षक का प्रथम उत्तरदायित्व बच्चों को एक अच्छा व्यक्ति बनने में सहायता करना है, और अपनी क्षमताओं का सम्पूर्ण प्रयोग करने के लिए उत्साहित करना है। ऐसा सिर्फ उसके हित में ही नहीं वरन् समाज की भलाई के लिए भी है। इस तरह शिक्षक की तुलना माली से की जा सकती है। जो बच्चों में ज्ञान और अच्छे संस्कारों का बीज बोता है, उसे ममत्व और करूणा के पानी से सींचता है और अज्ञानता की खरपतवार को हटाता है। अच्छे शिक्षक शांति मूल्यों के आदर्श होते हैं, यथा– इनमें सुनने की कला, गलती को पहचानने और उसे सही करने की विनम्रता होती है, ये अपने द्वारा किए गए कार्यों की जिम्मेदारी लेते हैं, चिंताओं को साझा करते हैं और मतभेदों से परे एक–दूसरे की समस्याओं को हल करते हैं। यदि ये शांति का उपदेश न भी दें तो भी अपने हाव–भावों से शांति के लिए शिक्षा देते हुए प्रतीत होते हैं।

कक्षा में सकारात्मक वातावरण कायम करने में शिक्षक की भूमिका सर्वोच्च होती है। एक शिक्षक अपनी अभिवृत्तियों, सोचने के स्वाभाविक तरीकों और शिक्षण के उपागम को आवश्यक रूप से आमंत्रित कर सकता है। शिक्षक क्या पढ़ाता है और जो पढ़ाया है उसमें हस्तांतरित मूल्य क्या है और इन्हें कैसा पढ़ाया गया है– वही शांति के लिए शिक्षा की पूंजी है।

बच्चे सलाह के लिए अपने कान–बन्द कर लेते हैं और उदाहरण के लिए अपनी आँखें खोल लेते हैं। यह भारतीय संदर्भ में एकदम उपयुक्त है जहाँ शिक्षकों को ज्ञान और बुद्धिमत्ता का स्रोत माना जाता है। बच्चे शांति संस्कारों को तभी सीख पाएंगे, जब उनके माता–पिता एवं शिक्षक व्यवहारतः आदर्श के रूप में इनको पेश करें। अगर बड़ों की करनी एवं कथनी में अन्तर निकला तो बच्चे उसी का अनुकरण करेंगे जो सचमुच किया गया है। अतः शिक्षक एवं माता–पिता को बच्चों के ऊपर अपने व्यवहार के प्रभाव के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है। उदहारण के लिए– बच्चों को ''दूसरों की देखभाल'' के लिए प्रेरित करने के बजाय इस मूल्य को व्यवहार में लाना और बच्चों को इसकी समझ स्वयं बनाने का अवसर ज्यादा प्रभावी होगा।

0;ogkjokn e: mnnhiu ,o vufØ;k

ge viu ckj e D;k vuHko djr g\ fopkj djA

हम अपने में अनोखे होते हैं! अपने आपसे हमारा संघर्ष चलता रहता है। हम स्वयं को यदि मूल्यवान समझते हैं तब हमें अपना सम्मान प्रिय होता है। हमें अपने ऊपर यह विश्वास होता है कि हम अपनी बातों को अपनी भावनाओं को, अपने अधिकारों, अपने सपने और अपनी रूचियों को बेहतर ढंग से कह सकते हैं। हमें अपनी कार्यों की जिम्मेदारी लेनी होती है तभी हम कार्यों को सफलतापूर्वक अच्छे ढंग से कर पाते हैं। और जब हमारा कार्य अच्छा सम्पादित होता है तब हमें खुशी होती है। यही खुशी अथवा प्रसन्नता हमारे स्वास्थ्य को स्वस्थ बनाती है। जैसा कि कहा भी गया है– Healthy mind live in a healthy body. स्वस्थ्य मन स्वस्थ्य शरीर में निवास करता है।

इसलिए इस बात का बहुत महत्व है कि स्वयं को मूल्यवान समझें और अपनी प्रशंसा करें तथा इसके साथ ही साथ अपने आस–पास के अन्य व्यक्तियों को भी महत्व दें, उनकी भी प्रशंसा करें।

हमारे जीवन में माता–पिता और शिक्षक एवं मित्र का महत्वपूर्ण योगदान होता है। निश्चित रूप से, जब हम किसी परेशानी में होते हैं तो हमारे समक्ष कोई बाधा था मुसीबत आती है, तब वे ही हमें शक्ति और सहयोग प्रदान करते हैं। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि इन सम्बन्धों को हम अपने व्यवहार से मजबूत और प्रशंसनीय, स्वस्थ्य बनाये रखें।

vkb,] dN egRoi.k fcUnvk dk tku&

- सकारात्मक व्यवहार हमारे कार्य को अच्छा बनाते हैं और हमारे आत्मसम्मान तथा आत्मविश्वास को बढ़ाते हैं।
- दूसरों की प्रशंसा करना हमें अच्छा अनुभव कराता है।
- जब हम अच्छा अनुभव करते हैं, तब हम प्रतिदिन की परिस्थितियों को सकारात्मक ढंग से पूर्ण करते हैं।
- हमें आत्म परीक्षण पूर्ण ईमानदारी से करना चाहिए।
- स्वाभाविक रूप से हमें दूसरों की प्रशंसा ईमानदारी से करनी चाहिए।
- सकारात्मक दृष्टिकोण हमें अपनी असफलताओं और कर्मियों को पहचानने में सहायक होता है, जिससे हम उन कमियों को दूर करने में सक्षम होते हैं।
- हमें तनावपूर्ण परिस्थितियों में सकारात्मक व्यवहार

çf'k{k fuEufyf[kr I dkjkRed rjhdk dk crk,&

- गहरी साँस लेना।
- मनपसन्द गीत सुनना।
- उस स्थान को छोड़ देना।
- कहानी सुनना।
- अपना पंसदीदा कार्य करना।
- रचनात्मक कार्यों में स्वयं को लगाना, यथा– पेटिंग, करना, क्रॉफटिंग कार्य करना आदि।
- किसी अन्य की सहायता करना।
- अपनी बातों को बड़ों से साझा करना, जैसे– माता पिता से, शिक्षक से, मित्र से।
- कॉमेडी फिल्म, कॉटून फिल्म देखना।

अपनाने का कौशल स्वयं में विकसित करना होगा। तभी हम सकारात्मक परिस्थितियों में उचित ढंग से व्यवहार करने में कुशल हो सकेंगे।

- हमें विभिन्न परिस्थितियों में कई प्रकार के सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही विचारों का अनुभव होता है जैसे– खुशी, संतुष्टि, गुस्सा, दुख, निराशा।
- किसी भी तनावपूर्ण परिस्थिति को सकारात्मक तरीके से व्यक्त करना, नकारात्मक विचारों को समाप्त करने में मदद करता है, तथा उसके साथ ही परिस्थितियों का विश्लेषण करने तथा उसके कारणों को समझने, और भविष्य में पुनः न करने तथा परिस्थितियों को सुधारने में मदद करता है।
- प्रत्येक व्यक्ति स्वयं में अनोखा एवं विविध योग्यताओं वाला होता है, जिसका अपना महत्व होता है।

'kkfr d fy, fuek.kdkjh 0;ogkj d ikR lkgu gr j.kuhfr;k

^vxj ge fo'o dk okLrfod 'kkfr dk ikB i<kuk pkgr g] rk ge 'k:vkr cPpk l djuh gkxhA**& egkRek xk/kh th d vuqlkj

*blh lUnHk e ^ekfj;k ekUVlj h dk dguk g& ^lkjh f'k{kk 'kkfUr d fy, gh gA***

सम्पूर्ण विद्यालयी पाठ्यचर्या में शांति का परिदृश्य अंतर्निहित हो, ऐसा सोचने–विचारने का अब समय आ गया है। शांति के लिए शिक्षा कई मायनों में शांति–शिक्षा से अलग है। शांति–शिक्षा से भिन्न शांति के लिए शिक्षा शांति की संस्कृति को बढ़ावा देने के लक्ष्य को शिक्षा के उद्यम को आकार देने के उद्देश्य के रूप में मानती है। यदि स्पष्ट दृष्टि और लगन के साथ शांति के लिए शिक्षा को लागू किया जाए, तो वह सीखने की प्रक्रिया को अत्यधिक आनंददायक और सार्थक बना सकती है।

शांति के लिए शिक्षा के अन्तर्गत सीखने की प्रक्रिया में अध्यापक की निर्णयक भूमिका का और विद्यालयों को शांति की पौधशाला बना देने की आवश्यकता का भी परीक्षण करना है।

शांति के लिए शिक्षा के मुख्य कार्य दो प्रधान लक्ष्यों के सन्दर्भ में है यथा– व्यक्तित्व निर्माण एवं उत्तरदायी नागरिकों का निर्माण। शान्ति के लिए शिक्षा के मुख्य कार्यक्षेत्र हैं–

- शिक्षा के द्वारा व्यक्तियों में शांति के प्रति झुकाव पैदा करना।
- विद्यार्थियों के भीतर उन सामाजिक कौशलों और अभिरूचियों का पोषण, जो दूसरों के साथ सामंजस्यपूर्वक जीने के लिए जरूरी है।
- संविधान में सुविचारित सामाजिक न्याय की अवधारणा पर बल देना।
- धर्मनिरपेक्ष संस्कृति को प्रचारित करने की जरूरत और कर्त्तव्य।
- लोकतांत्रिक संस्कृति को प्रेरित करने वाले उत्प्रेरक के रूप में शिक्षा।
- शिक्षा के द्वारा राष्ट्रीय अखंडता को बढ़ावा देने के प्रयास।
- जीवन शैली सम्बन्धी एक आन्दोलन के रूप में शांति के लिए शिक्षा।

शांति के लिए शिक्षा को अलग विषय के रूप में नहीं दिया गया है ताकि पाठ्यचर्या के बोझ का तर्क न दिया जाए, वरन् इसे सभी विषयों को पढ़ाने में निहित एक परिप्रेक्ष्य के तौर पर देखा गया है।

शांति के लिए शिक्षा प्रदान करते समय हमें निम्नलिखित सुझावों पर ध्यान देना होगा, यथा–

1. बच्चों के प्राथमिक विद्यालयी वर्षों में मूल्यों की नींव रखने और व्यक्तित्व के निर्माण पर जोर दिया जा सकता है। इसके साथ ही सामांजस्य के साथ जीने के लिए आवश्यक सामाजिक कौशलों पर भी। इसके पश्चात् शांति के परिपेक्ष्य पर केन्द्रित किया जा सकता है, विशेष रूप से बच्चों को शांति के लिए मूल्य आधारों को समझने के योग्य बनाने के लिए। यहाँ पर इस बात पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है कि द्वंद्वों के शांतिपूर्ण निपटारे के कौशलों को बढ़ावा मिले।
2. उच्चतर प्राथमिक विद्यालय के दौरान विद्यार्थी भारतीय इतिहास, दर्शन और संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में शांति की संस्कृति को देख पाने में समर्थ बन सकें।
3. शांति के लिए शिक्षा नागारिकता सम्बन्धी शिक्षा पर अधिक केन्द्रित होनी चाहिए। तदोपरान्त ''जीवन शैली सम्बन्धी एक आन्दोलन के रूप में शांति'' पर बल दिया जा सकता है। सृजन की निरंतरता और समाज की स्थिरता के लिए सहायक जीवनशैली निर्मित करने की जरूरत के प्रति विद्यार्थियों को जागरूक बनाया जा सकता है।
4. कक्षा 11 एवं 12 वीं के स्तर पर शांति के लिए शिक्षा निम्नांकित बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित कर सकती है, यथा–

- हिंसा के कारणों, उसके तरीकों और अभिव्यक्तियों की समझ।
- मुद्दों की वस्तुनिष्ठ समझ हासिल करने का कौशल।
- शांति पर एक वैश्विक दृष्टिकोण का विकास।
- *शांति के लिए शिक्षा को आकार देने वाली कुछ आधारिक मान्यताएं हैं, यथा–*
- विद्यालयी शांति की पौधशालाएं हो सकते हैं ।
- शिक्षक सामाजिक सुधारक हो सकते हैं।
- शांति के लिए शिक्षा पूरी शिक्षा को मानवीय बना सकती है।
- शांति के कौशल और उसका रूझान जीवन–यापी गुणवत्ता का कारण बनते हैं।
- न्याय शांति का अंतरंग हिस्सा है।

vokfNr 0;ogkj dks ldkjkRed rjhds ls grksRlkfgr djus dh j.kuhfr;k¡

अंवाछित व्यवहार को सकारात्मक तरीके से हतोत्साहित करने की कुछ रणनीतियाँ बनाई जा सकती है। इसके लिए शांति के लिए शिक्षा को विद्यालय के सह–पाठ्यक्रम के जरिए भी व्यवस्थित

किया जा सकता है। शांति विषय को साकार करने वाली रणनीतियों में कई गतिविधियों और परियोजनाएं विद्यालय में आयोजित की जा सकती हैं, यथा–

- वाद–विवाद, संगोष्ठी और श्रव्य–दृश्य आयोजन में शांति को शामिल कर छात्रों को शांति निर्माण का कौशल विकसित करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।
- भूमिका निभाने, नाटकों, शांति कविताओं के सृजन, शांति गीत आदि में बच्चों की भागीदारी।
- अंतर्राष्ट्रीय दिवसों यथा– मानवाधिकार दिवस, बाल दिवस, संयुक्त राष्ट्र दिवस, विकलांग, दिवस, पर्यावरण दिवस आदि में भागीदारी।
- दूसरों के प्रति संवेदनशीलता विकसित करना। बच्चों को वृद्वाश्रमों, अन्य पीड़ित, संगठनों के दौरे के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है जिससे उनमें उनके कल्याण की भावना का विकास हो सके।
- स्कूल और पड़ोस में धार्मिक उत्सवों और राष्ट्रीय दिवसों को मनाना।
- सहनशीलता और समझ को बढ़ाने के लिए कहानियों और चर्चाओं को बढ़ावा देना।
- शांति से जुड़े आयामों के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए ''टेलीविजन और रेडियो खेलो'' और साथ ही साथ ''शांति प्रचारों '' का प्रयोग भी किया जा सकता है।

'kkfr d fy, fuek.kdkjh I dkjkRed 0;ogkfjd gLr{ki vkj Ig;kx d çkRIkgu grq j.kuhfr;k

शांति पर बल सिर्फ संकल्पनाओं को याद करने या पाठ्यसामग्री रटने या वैयक्तिक लक्ष्य और श्रेष्ठता पाने पर नहीं होगा, वरन् दूसरों के साथ सोचने–विचारने, साझा करने, ख्याल करने, एक दूसरे का सहयोग करने पर होगा। प्रत्येक विषय और अध्याय में शांति सम्मत (छिपे हुए या सुस्पष्ट) हिस्से होंगे जिन्हें सकारात्मक और मानवीय दृष्टिकोण से सुनियोजित योजना के साथ बच्चों तक पहुँचाने की जरूरत होगी। अध्यापन पद्धतियाँ रचनात्मक, बाल केन्द्रित, प्रयोगात्मक और समझदारीपूर्ण होनी चाहिए। इसमें सीखने के उपयुक्त अनुभव, चर्चाएं, बहसें, प्रस्तुतीकरण, सामूहिक और सहकारी परियोजनाएं शामिल हो सकती हैं। परन्तु यह सब बच्चों/छात्रों के परिपक्व स्तर और विषय सामग्री पर आधारित होनी चाहिए।

छात्रों में विभिन्न संस्कृतियों और मौलिक साझे मूल्यों के बारे में खुलापन और व्यापकार्थ विकसित करने के लिए शिक्षक और विद्यालय को अन्य संदर्भ–विशिष्ट रणनीतियाँ विकसित करनी चाहिए।

मानवीय और सकारात्मक परिप्रेक्ष्य में अध्याय को प्रस्तुत करना शिक्षा का मूल आधार है। शिक्षक को सकारात्मक भावनाएं और अनुभव जगाने चाहिए। स्व को समझने मे मदद करनी चाहिए, प्रश्न पूछे जाने पर पूछताछ सम्बन्धी खुलेपन को बढ़ावा देना चाहिए। संस्कारों को खोजने एवं निर्माण करने की समझ होनी चाहिए। तथा संस्कारों को प्रयोग में लाने के अवसर उपलब्ध कराने चाहिए। प्रश्न, कहानियाँ, दंतकथाएं, खेल, प्रयोगात्मक चर्चाएं, संवादों, मूल्य स्पष्टीकरण, उदाहरण, समानुपात, रूपक

और स्वांग सरीखे उपकरण शिक्षण अधिगम के जरिए शांति को आगे बढ़ाने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। कुछ शांति मूल्यों को उस समय उचित ढंग से समाविष्ट किया जा सकता है जब कोई विषय किसी विशेष स्तर या ग्रेड पर हो, जबकि अन्य को अलग ग्रेड में किसी दूसरे विषय के साथ अच्छे ढंग से मिलाया जा सकता है। इसे हम कह सकते हैं कि विषयोचित और स्तर–ग्रेडोचित रणनीतियों को रेखांकित किए जाने की आवश्यकता है।

इस सारे परिदृश्य से यह निकलकर आता है कि शांति की संस्कृति को बढ़ावा देने वाली शिक्षा में शिक्षक ही अहम् भूमिका निभा सकता है। यह तथ्य कि सिखाना बच्चों पर केन्द्रित होना चाहिए। इसका विरोध नहीं करता। अगर शिक्षक पहल करें तभी शिक्षा बच्चों पर केन्द्रित हो सकती है। छात्र केन्द्रित उपागम को इस तरह से समझना गलत होगा कि उसमें सीखने की प्रक्रिया के भीतर शिक्षक की भूमिका बहुत कम रह जाती है।

शांति के लिए शिक्षा में काफी कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि शिक्षक खुद शांति के लिए कितना प्रेरित एवं उत्साहित है। शिक्षक को शांति के अवसरों के प्रति सजग रहना होगा तथा रचनात्मक तरीके से उनका पूरी पाठ्यचर्या में विनियोग करना होगा।

शिक्षण अधिगम सम्बन्धी गतिविधियों के कुछ उदाहरण नीचे दिए जा रहे हैं जिन्हें विषय सामग्री में समाविष्ट किया जा सकता है। शिक्षक इस बात का सही निर्णय कर सकता है कि इनका प्रयोग कहाँ करना है।

cPpk l dgk tk ldrk g&

- उन विभिन्न तरीकों का प्रदर्शन करें जो कोई घर या स्कूल में बुजुर्गों को सम्मान देने के लिए अपनाता है। हम वस्तुएं माँगते समय, सुनते समय और बात करते समय किस प्रकार आदर का प्रदर्शन कर सकते हैं? (परिवेश सम्बंधी/अध्ययन भाषा में)
- 'सहयोग' शब्द का अर्थ विभिन्न तरीकों से व्यक्त करना। (भाषा)
- कठपुतलियों का प्रयोग करते हुए उचित शब्दों एवं मुद्राओं की सहायता से यह प्रदर्शित करें कि द्वंद्वों के हल शांतिपूर्ण ढंग से कैसे होते हैं। (पर्यावरणीय अध्ययन/भाषा)
- शांतिपूर्ण संसार की कल्पना करें और सोंचे कि यह कैसा दिखेगा। (सामाजिक विज्ञान)
- यह बतलाना कि गुस्सा शांति का कैसे नाश करता है। (सामाजिक विज्ञान/भाषा)
- अगर हम शांतिपूर्ण संसार चाहते हैं तो उन बदलावों को पहचानिए जिन्हें लाने की जरूरत है। इन बदलावों में किसी व्यक्ति की निजी भावनाएं और मूल्य भी शामिल है। (सामाजिक विज्ञान)
- ऐसी अधिक से अधिक सम्भव गतिविधियों का पता लगाएं जो अच्छी हैं और हम अपने हाथों से अन्य के साथ मिलकर कर सकते हैं। (भाषा)
- शांति संदेश के साथ अधूरी कहानी को विभिन्न तरीकों से पूरा करें। (भाषा)
- व्हील कुर्सी पर बैठे व्यक्ति के प्रति मदद करने वाले और ख्याल रखने वाले भाव, तरीके, मुद्राओं का प्रदर्शन करें। (भाषा)

- पेड़, झाड़, विभिन्न नागरिक सुविधाओं वाली वस्तुओं की भूमिका निभाना, यह दिखाना कि ये कैसे हमें लाभ पहुँचाती हैं। (पर्यावरणीय अध्ययन/भाषा)
- तस्वीर पर आधारित कहानी, कविता, विचार को चार्ट पर प्रदर्शित करना। वास्तविक होने के अलावा कहानी कोई सामाजिक या नैतिक संदेश देने वाली भी हो सकती है। (भाषा)
- दूसरों के प्रति संवेदनशील, सहनशील होने पर कहानी लिखना। विभिन्न विषयों पर अखबारों की क्लिपिंग, पत्रिका, लेख, इकट्ठे करना और दीवार पत्रिका बनाना। (भाषा)
- समूह कार्य, उपलब्ध संसाधनों के प्रयोग से कमजोर छात्रों को प्रभावित करने वाली किसी समस्या का हल निकालना। (पर्यावरणीय/सामाजिक विज्ञान)
- एक वस्तु दिखाइए, उदाहरण के लिए फूल, और बच्चों से कहिए उस पर कुछ पंक्तियाँ, कविता या गीत लिखें जिसमें फूल या अन्य वस्तु की विशेषताओं की तुलना अच्छे व्यक्ति से की जाए। (भाषा)
- ईमानदारी और कड़ी मेहनत जैसे मूल्य दर्शाने वाली कविता या गीत का सृजन (भाषा)
- ऐसे व्यक्ति के कार्य को संग्रहित कीजिए जो अधिक जाना–पहचाना न हो, लेकिन उसने लोगों के कल्याण के लिए कार्य किया हो। उसकी खूबियों का विश्लेषण भी कीजिए। (सामाजिक विज्ञान)
- समुदाय या इलाकों की ऐसी समस्याओं की पहचान कीजिए जिनके लिए रचनात्मक हल की जरूरत हो। (सामाजिक विज्ञान)
- शिक्षक के जीवन का एक दिन विषय पर लेखन। (भाषा)
- सड़क पर बच्चों की मदद के लिए विभिन्न उपायों की कल्पना करना। जैसे– छात्र लिखें कि किस प्रकार दूसरों की अधिक देखभाल की जा सकती है। विशेषरूप से अपने से छोटों और जरूरत मन्दों की। (भाषा)
- स्थानीय अनाथालयों और वृद्धाश्रमों के लिए कार्यक्रम आयोजित करना जिससे विद्यार्थी/छात्र समुदाय को इस समूह के अकेलेपन, दर्द और मजबूरी को महसूस कर सकें।
- कार्यक्रमों, चर्चाओं, कार्यशालाओं और फिल्म शो का आयोजन करना, जिनमें मानव जाति के लिए प्यार और चिंता समाहित हो। यहाँ विज्ञान और नैतिकता को लिया जा सकता है।
- नाटकों, सामूहिक गान और समूह कार्य आदि द्वारा सामाजिक कौशल के विकास के अवसर उपलब्ध कराएं।
- अखबार की सामग्री, समाचारों और सामाजिक विषयों पर चर्चा का आयोजन करें।
- छात्र को अपने अनुभवों से अवगत कराएं जिससे कक्षा के समस्त बच्चे भय और चिंता से निपटने की रणनीति समझ सकें।

d{kk esa gkus okys vknku&inku esa 'kkfr ds ljkdkjks dk lekfgr djuk

विद्यालयी पाठ्यक्रम में शांति मूल्यों को शामिल करने का अर्थ यह नहीं होना चाहिए कि विद्यालयी विषयों को शांति के लिए शिक्षा के वाहनों की तरह प्रयोग किया जाय। न ही उसे संबंधित विषय को रूचिकर बनाने का माध्यम ही समझा जाए। शिक्षा आयोग (1964–66) का अपनी रिपोर्ट में यह उल्लेख है– ''शिक्षक को हर समय पाठ में निहित नैतिकता का उपदेश देने की जरूरत नहीं है, लेकिन अगर उसने विषय की परिधि में आने वाले मूल्यों पर और अपने अध्यापकीय दायित्व पर थोड़ा सोचा समझा है, तो वह सोच स्वयं ही उसके अध्यापन का अंग बन जाएगी और छात्रों के मन पर समुचित प्रभाव डालेगी। ''

bfrgkl eqxy lekV vdcj dk ,d v/;k;&

शिक्षक इस अध्याय का प्रयोग अकबर की धार्मिक सहिष्णुता की नीति को छात्रों को समझाने के लिए कर सकते हैं। निम्नांकित बिन्दुओं को महत्व दिया जा सकता है–

- धार्मिक सौहार्द्र हमारी सांस्कृतिक धरोहर का मूल है।
- असत्य और अन्याय का सहारा लेकर कुछ समुदायों और समूहों के बारे में रूढ़ धारणाएं बनाई जा रही हैं।
- आज के समय में धार्मिक सहिष्णुता की जरूरत है।
- शांति की संस्कृति और युद्ध की संस्कृति एवं वैषम्य युद्ध की संस्कृति में, धर्म हिंसक बन जाते हैं।

vH;kl ç'u

1. सहपाठी के सम्बंधों की समझ एवं आपसी सम्बंधों का विकास कैसे उचित प्रकार से सम्भव हो पाता है? स्पष्ट करें।
2. आपसी सम्बंधों को स्वस्थ्य बनाए रखने हेतु अपनाने योग्य जीवन कौशल क्या–क्या हैं ? स्पष्ट करें।
3. परिवार, माता–पिता एवं शिक्षक हमें कौन–कौन से नैतिक/मानवीय मूल्य सिखाते हैं ?
4. नैतिक /मानवीय मूल्यों का हमारे लिए क्या महत्व है?
5. नैतिक विकास से आप क्या समझते हैं ?
6. सकारात्मक तरीके कौन–कौन से हैं?
7. शांति निर्माता के रूप में कुशल शिक्षक का क्या महत्व है ?
8. शांति के लिए निर्माणकारी व्यवहार के प्रोत्साहन हेतु रणनीतियाँ क्या हो सकती हैं ? लिखें।
9. अवांछित व्यवहार को सकारात्मक तरीके से हतोत्साहित करने की रणनीतियाँ बताइए।
10. सकारात्मक व्यवहारिक हस्तक्षेप और सहयोग हेतु रणनीतियों पर प्रकाश डालें।

हिंसा क्या है और यह क्या करती है

mnn' ;

- शिक्षा द्वारा हिंसा से सम्बन्धित मुद्‌दों के प्रति जागरूक करना।
- प्रशिक्षुओं को हिंसा के विभिन्न रूपों से आगाह कराना।
- हिंसा के विभिन्न रूपों के प्रति उनकी अभिव्यक्ति व विश्वास को परखना।
- हिंसा से निपटने की समझ विकसित करना।

e[; f'k{k.k fcUn

- हिंसा क्या है
- यह क्या करती है
- हिंसा के प्रकार

fg lk D;k g

जिस कार्य से दूसरों का अहित हो वही हिंसा है। आमतौर पर शारीरिक प्रताड़ना यानी मार–पीट, जान से मारना, किसी को मानसिक दुख देना, किसी पर क्रोध करना, यह सब हिंसा का रूप है। क्रोध, लोभ, अति संग्रह करने की इच्छा, ईर्ष्या, स्पर्धा, अन्धविश्वास आदि मानवीय अवगुण हिंसा को बढ़ावा देते हैं। ऐसे अवगुणों से प्रेरित होकर मनुष्य सम्प्रदाय, स्वाभिमान व अधिकार प्राप्ति के नाम पर दंगे करते हैं, जो समाज में शांति की उपस्थिति में बाधा डालते हैं। अमीरी–गरीबी भेदभाव, राजनीतिज्ञों द्वारा स्वार्थमय नीति निर्माण कार्य, आत्मनिर्णय के अधिकारों का हनन, लिंग–विभेद में वृद्धि, शैक्षणिक व्यवस्था में कमियाँ, अन्यायपूर्ण आर्थिक व्यवस्था व वितरण हिंसा के कारण ही उत्पन्न हुआ हैं।

bUg Hkh tku&

- किसी जीव को सताना हिंसा है
- झूठ बोलना हिंसा है
- धोखा देना हिंसा है
- किसी की चुगली करना हिंसा है
- किसी का बुरा चाहना हिंसा है
- किसी की निंदा करना हिंसा है
- किसी का पक्षपात करना हिंसा है
- किसी को गाली देना हिंसा है
- किसी पर कलंक लगाना हिंसा है
- बड़ों का सम्मान न करना हिंसा है
- सच्ची बात को छिपाना हिंसा है

ppk dj& çf'k{kvk l ppk dj fd fg lk D;k g l

- अनेक विचारकों ने हिंसा पर अपने विचार दिए हैं–
- ''किसी व्यक्ति के लिए बुरा सोचना या गलत भाव रखना हिंसा है।''– महात्मा गाँधी
- ''हिंसा अर्थात् आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक क्षेत्र में होने वाला शोषण।'' – महात्मा गाँधी
- ''जो बीमारी दूर करने योग्य है, उसे दूर न करना हिंसा है।'' – जोहन गाल्टूँग

सत्य, प्रेम, त्याग, सहयोग की भावना, भाई–चारा, अपरिग्रह आदि गुणों का विकास करके हिंसा पर विराम लगाया जा सकता है।

fglk d çdkj

1. मौखिक हिंसा (Verbal violence)

2. मनोवैज्ञानिक हिंसा (Psycloogical violance)

3. शारीरिक हिंसा (physical violence)

4. ढांचागत हिंसा (structural violence)

5. लोकप्रिय संस्कृति में अश्लीलता (vulgarity in popular culture)

वाणी की हिंसा बहुत प्रभावी होती है क्योंकि वाणिक हिंसा मन पर वार करती है। वाणी हमारे भीतर की पहचान होती है।

''वाणी और सद्व्यवहार से द्वेषभाव भी समाप्त हो सकता है।'' – महात्मा आनन्द स्वामी

इसी संदर्भ में एक कहानी प्रस्तुत है– एक व्यक्ति को ईश्वर ने प्रसन्न होकर तीन गोले दिए और कहा, हर गोले को भूमि पर गिरा कर वह जो तीन बातें बोलेगा, वे पूरी हो जाएंगी। वह खुशी–खुशी घर में घुस ही रहा था कि उसका बेटा आकर उससे लिपट गया जिससे एक गोला गिर गया। वह गुस्से से बोला, ''तेरी आंखे नहीं है ? इतना कहते ही आंखे चली गई। उसने झट दूसरा गोला जमीन पर गिरा कर कहा, मेरे बेटे के चेहरे पर आँखे आ जाए। बच्चे के चेहरे पर कई आंखे लग गई। उसकी भयानक सूरत देखकर उसने झट तीसरे गोले को नीचे गिराया और कहा, 'बेटे का चेहरा सामान्य हो जाए। इस तरह उसके तीनों वरदान वाणी की असंयमता के कारण बेकार हो गए।

ppk dj& प्रशिक्षक कक्षा में प्रशिक्षुओं से कहानी की चर्चा करें एवं अपने विचारों व अवलोकन को प्रस्तुत करने को कहें। प्रशिक्षु को चाहिए कि वह मुद्दों पर विचार विमर्श करें और उन मुद्दों को बच्चों के समक्ष सरलता व सहजता से प्रस्तुत करें।

न सिर्फ हमारे आस–पास घटित होने वाली घटनाएं वरन् मनोवैज्ञानिक कारण भी इस बात की हामी भरता है। ऐसे में सवाल यह उठता है कि आखिर हिंसा के पीछे कौन सा मनोविज्ञान होता है, जो व्यक्ति के सोचने समझने की शक्ति को गवां बैठता है? इस हिंसा के पीछे परिवार की रूढ़िवादिता, बचपन में हुआ दुर्व्यवहार इत्यादि हो सकता है। जिसमें लड़कों को कुछ भी करने की छूट प्रदान की जाती है और लड़कियों को बर्दास्त करने के लिए प्रेरित किया जाता है साथ ही साथ कोई मानसिक विकृति भी मनोवैज्ञानिक हिंसा का कारण हो सकता है। समाज में जैसे–जैसे अहं बढ़ रहे हैं वैसे–वैसे स्त्री–पुरुष के अहं बढ़ रहे हैं। इसके कारण जरा सी बात शुरू हुई कि बात हद तक बढ़ जाती है। इन सबके पीछे मानसिक तनाव बहुत बड़ा मनोवैज्ञानिक कारण हो सकता है।

l>ko

मानसिक रूप से तनावग्रस्त व्यक्तियों का मनोवैज्ञानिक ढंग से सलाह व इलाज कराया जाए और उनमें गौरवपूर्ण जीवन जीने का आत्मविश्वास जगाया जाए।

अपने अधिकारों की प्राप्ति हेतु विभिन्न सामाजिक संस्थाओं व कानून का सहारा लेने के प्रति जागरूक बनाया जाए।

यदि बच्चे नियन्त्रण में न हों, बहुत जिद्दी हों तब किसी अच्छे मनोवैज्ञानिक से सलाह लेना उचित रहता है।

समाज, परिवार में महिला तथा इसके अलावा किसी भी व्यक्ति के साथ मारपीट करना शारीरिक हिंसा के अन्तर्गत आता है। महिला, वृद्ध तथा बच्चे इस श्रेणी में आते हैं। शारीरिक हिंसा महिलाओं को मानसिक ही नहीं, शारीरिक रूप से भी लम्बे समय तक प्रभावित करती हैं। महिलाओं को किसी भी प्रकार की हिंसा सहन नहीं करनी चाहिए। हिंसा होने पर उसका विरोध करना हर महिला का अधिकार है।

बेहतर जिंदगी और श्रेष्ठ समाज व परिवार के लिए सबसे जरूरी चीज है संवेदना। संवेदना यानी दूसरे की वेदना को खुद महसूस कर पाना। संवेदना ही मनुष्यता को विस्तार देती है। पारिवारिक सदस्यों में परस्पर संवेदनशीलता जितनी ज्यादा होगी, रिश्ते उतने ही गहरे और मजबूत होंगे। मनुष्य संवेदनशील, परिवार संवेदनशील और समाज संवेदनशील हो, तो काफी कुछ परेशानियाँ और दुख खुदबखुद खत्म हो जाएंगी। लेकिन हकीकत में ऐसा नहीं।

कभी–कभी परिस्थितियों से विवश होकर महिलाएं हिंसा जगत में पहुंच जाती है या उन्हें जाने के लिए बाध्य कर दिया जाता है। जैसे सिनेमा जगत में अश्लील नग्न शरीर प्रदर्शन, वेश्यावृत्ति आदि प्रवृत्तियाँ भी हिंसा का रूप है।

ehfM;k vkSj fgalk

आज मीडिया मानव जीवन का अहम हिस्सा बन चुकी है। मीडिया और समाज एक सिक्के के दो पहलू का रूप ले चुके हैं जिसे अलग करके नहीं देखा जा सकता है। ये तो स्वयं सिद्ध है कि मीडिया सूचनाओं के आदान–प्रदान या जनमत के निर्माण का माध्यम ही नहीं बल्कि किसी देश की छवि निर्माण का बहुत बड़ा औजार भी है। वह अपनी सामग्री और उसके प्रस्तुतीकरण के अंदाज से किसी देश की अच्छी या बुरी छवि निर्मित करता है। मीडिया को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

1. लोक संचार माध्यम
2. जन संचार माध्यम

3. मुद्रित माध्यम (प्रिंट मीडिया)

लोक संचार माध्यम रेडियों और टेलीविजन के आगमन के पहले से ही ग्रामीण समुदायों में प्रचलित रहे हैं। इन माध्यमों में स्थानीय भाषा, अथवा बोली, वेशभूषा तथा आवश्यक परिस्थितियों का उपयोग किया जाता है। लोक संचार माध्यम में कठपुतली का खेल, लोकनाट्य, लोकगीत व लोकनृत्य शामिल है। कठपुतली का खेल ग्रामीण समुदाय के लिए बहुत मनोरंजनपूर्ण, सूचनाप्रद तथा शिक्षाप्रद साधन हो सकता है। किसी विशेष संदेश को दर्शाने वाली कक्षा तैयार करके कठपुतली का खेल के माध्यम से प्रस्तुत की जा सकती है। इसे पूरा परिवार एक साथ देख सकता है तथा आमतौर पर इसका प्रदर्शन सार्वजनिक जगह चौपाल, पंचायत, घर इत्यादि में किया जाता है। लोकनाटक मामूली प्रयास से शिक्षाप्रद हो सकते हैं। हिंसा व अन्य सामाजिक बुराइयों पर आधारित विषयों के सफल क्रियान्वयन व जानकारी से होने वाले लाभ व हानि के प्रति जागरूक किया जा सकता है।

आज के आधुनिक युग में समाज की विभिन्न बुराइयों को दूर करने में जन संचार माध्यमों की जिम्मेदारी बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसके अन्तर्गत सभी सूचना माध्यम रेडियो, दूरदर्शन, समाचार–पत्र और नियतकालीन पत्र–पत्रिकाएँ आती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना एवं जानकारी पहुंचाने का रेडियो सबसे सरल कारगर व शक्तिशाली माध्यम है। और भ्रष्टाचार, अत्याचार, लिंग–भेदभाव, गरीबी, सांप्रदायिकता इत्यादि के बारे में जानकारी देने का सशक्त माध्यम है। आजकल दूरदर्शन के चैनलों के कार्यक्रमों एवं विज्ञापनों में हिंसा सम्बंधित दृश्य दिखाए जाते हैं कि जो कि समाज में बुराई फैलाने का काम करते हैं। इसके अतिरिक्त, समाचार–पत्र, पत्रिकाएँ एवं पोस्टर संचार का प्रमुख माध्यम है। समाचार पत्रों का प्रमुख कर्त्तव्य सरकारी योजनाओं एवं कार्यक्रमों की पूर्ण जानकारी जनता को देना तथा लोगों को उनके अधिकारों के बारे में जागृत करना है। ये घोटालों का पर्दाफाश करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

प्रिंट मीडिया के अन्तर्गत संचार का एक प्रमुख माध्यम पोस्टर व विज्ञापन भी है। ये देखने भर से चेतना जगा देतें हैं और कई संदेश दे जाते हैं, सही स्थान पर लगाया गया इश्तिहार एवं पोस्टर रोज आने जाने–वाले व्यक्ति पर गहरा प्रभाव छोड़ता है। इस प्रकार विभिन्न संचार माध्यमों का अलग–अलग महत्व है। यदि सभी संचार माध्यम सही तरीके और ईमानदारी से अपने लक्ष्य एवं जिम्मेदारियों का पालन करें तो वह दिन दूर नहीं जब भारत की साफ–सुथरी तस्वीर पूरी दुनिया के सामने होगी।

ppk dj& i.f'k{kd&i.f'k{kvk l ehfM;k dh fofHkUu ftEenkfj;k ij ppk djA

xk/kh n'ku

आधुनिक भारतीय चिन्तकों में सत्य व अहिंसा के मेरूदण्ड महात्मा गाँधी का अनन्य स्थान है। उन्होंने सत्य व अहिंसा के द्वारा न केवल राष्ट्र को स्वतंत्र कराने का चमत्कार पूर्ण कार्य किया वरन् समाज, धर्म, राजनीति

शिक्षा इत्यादि समस्त क्षेत्रों में राष्ट्र को नवीन आलोक से उद्भाषित किया। राष्ट्र को नई चेतना और नया जीवन प्रदान करने के कारण ही वह 'राष्ट्रपिता' के नाम से पुकारे जाते हैं। उन्होंने दो सदगुणों–सत्य के प्रति निष्ठा तथा प्राणि मात्र के प्रति प्रेम–को परीक्षण द्वारा व्यवहारिक जीवन में उतारकर अपने को महान बनाया। इस नैतिक नेतृत्व ने गांजी जी को भारत का ही नहीं, अपितु, विश्व के महान दार्शनिक की पंक्ति में बैठा दिया है।

मोहनदास करमचन्द गाँधी का जन्म 2 अक्टूबर 1869 को काठियावाड़, गुजरात में हुआ था। बाल्यकाल में उनके उर्वर मस्तिष्क पर रामायण, भागवत आदि वैष्णव ग्रन्थों का अत्याधिक प्रभाव पड़ा, जिसके फलस्वरूप धर्म एवं नैतिकता में उनकी दृढ़ आस्था हो गई। हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण कर कानून के अध्ययन हेतु वे इंग्लैण्ड चले गए तथा 1891 में बैरिस्टर बनकर भारत लौटे। यहाँ अल्प वास के पश्चात् वे दक्षिण अफ्रीका चले गए, जहाँ कई वर्षों तक उन्होंने जातिगत भेदभाव के विरुद्ध अहिंसक आन्दोलन चलाया। भारत लौटने पर उन्होंने स्वतंत्रता–संग्राम के नेतृत्व किया तथा सन् 1947 में देश को स्वतंत्र करवाया। सन् 1948 में एक हत्यारे की गोली से उनका प्राणान्त हुआ।

आधुनिक भारतीय दर्शन में गांधी का विशिष्ट योगदान नीति–मीमांसा तथा समाजदर्शन के सिद्धान्तों को व्यवहारिक रूप देने में निहित है। उनके दर्शन को मुख्यतः तीन भागों में बाँटा जा सकता है– तत्व मीमांसा, नीति मीमांसा तथा समाज दर्शन।

rRo ehekalk

गांधी दर्शन का केन्द्रीय सिद्धान्त है ईश्वर का प्रत्यक्ष उनकी ईश्वर की अवधारणा सत्य की अवधारणा से पृथक नहीं की जा सकती। ''हिन्दू धर्म'' नामक उनके ग्रन्थ के 38वें– 39वें खण्ड में हमें ईश्वर के अस्तित्व के पक्ष में कई तर्क मिलते हैं। इसी प्रकार उनके एक वाक्य में सृष्टिगत एवं प्रयोगजनमूलक युक्तियां मिले–जुले रूप में दिखाई पड़ती है। ''जगत में व्यवस्था है और प्रत्येक पदार्थ एवं जीवित प्राणी एक अटल नियम द्वारा संचालित है। यह नियम अन्धा नहीं है, क्योंकि जीवित प्राणियों के आचरण को किसी अन्य नियम द्वारा संचालित नहीं किया जा सकता तो फिर समस्त जीवन का संचालक वह, नियम ईश्वर ही है। नियम और नियामक एक ही है।''

गाँधी नैतिक युक्ति को अत्यधिक महत्व देते हैं। उनके लिए अन्तरात्मा ईश्वर की आवाज है, कर्त्तव्य का आदेश है जिसका उन्होंने सदैव पालन किया। गांधी यह मानते हैं कि इन युक्तियों के बावजूद साक्षात अनुभव के बिना किसी भी व्यक्ति को ईश्वर के अस्तित्व के बारे में कोई निश्चित प्रमाण नहीं दिया जा सकता। वे कहते हैं, '' एक निर्वचनीय रहस्यमयी शक्ति जो सर्वव्यापी है। मैं उसका अनुभव करता हूँ यद्यपि देखता नहीं। यह अदृश्य शक्ति अपने अस्तितव का अनुभव तो कराती है किन्तु समस्त प्रमाणों से परे हैं क्योंकि वह इन्द्रियों द्वारा अनुभूत अन्य समस्त पदार्थों से भिन्न हैं। वह इन्द्रियों से परे है।'' जहाँ तक ईश्वर के स्वरूप का प्रश्न है यह निस्सन्देह कहा जा सकता है कि गांधी की मानसिक एवं धार्मिक पृष्ठभूमि तथा शिक्षा निश्चित रूप से उन्हें वैयक्तिक ईश्वर के अधिक समीप ले

जाती थी। वैयक्तिक ईश्वर में विश्वास मूलतः सर्वोच्च शुभत्व की मान्यता से जुड़ा हुआ है। शुभत्व का एक पक्ष यह है कि नैतिक नियम का प्राकृतिक नियम से कोई विरोध नहीं। सम्भव है, ईश्वर की शक्ति कभी–कभी विध्वंसक जान पड़े, किन्तु गांधी के अनुसार ईश्वर केवल प्रेम–वश ही विध्वंस कर सकता है, घृणा–वश नहीं। ईश्वर का विध्वंस सर्व नाशक नहीं होता। जहां तक अशुभ का प्रश्न है गांधी उसे गलत स्थान में प्रयुक्त शुभ मानते हैं।'' अशुभ का कोई पृथक अस्तित्व है ही नहीं। वह अनुपयुक्त स्थिति में सत्य या शुभ ही है।

ईश्वर जगत का सर्वोच्च लोकतांत्रिक है क्योंकि वह हमें शुभ एवं अशुभ के बीच चुनाव करने की स्वतंत्रता देता है। – यंग इंडिया, 11 अक्टूबर 1928

अपने जीवन की अंतिम अवस्था में पहुंचकर गांधी निश्चित रूप से परमसत्ता को व्याख्यायित करने हेतु वैयक्तिक ईश्वर की अपेक्षा सत्य को अधिक महत्व देने लगे थे। प्रारम्भ में वे सत्य एवं ईश्वर को एक दूसरे का पर्याय मानते थे किन्तु जहाँ वे पहले साग्रह प्रतिपादित करते थे कि 'ईश्वर ही सत्य है' वहाँ वे इस सूत्र को बदलकर कहने लगे थे कि सत्य ही ईश्वर है'।

इस सूत्र के प्रथम भाग पर प्रकाश डालते हुए गांधी कहते हैं कि– ''ईश्वर ही सत्य हैं' में 'हैं' का अर्थ निश्चित रूप से 'के बराबर है' नही हैं' न ही, उसका अर्थ केवल 'सच्चा' है। सत्य ईश्वर का केवल गुण मात्र नहीं, अपितु वह है ही सत्य। वह सत्य नहीं तो और कुछ नहीं। डॉ0 नरवणे के अनुसार–

''सत्य ईश्वर हैं' सूत्र कुछेक व्यवहारवादी आवश्यकताएं पूरी करने एवं सार्वजनीन नैतिकता के लिए रास्ता बनाने के अलावा, स्वयं गांधी की अपनी मान्यताओंको एक समग्र जीवन–दृष्टि में सजाने में सहायता करता है।''

uhfr ehekalk

गांधी के अनुसार नैतिकता मानव जीवन की आधरशिला है। व्यक्ति एवं समाज का अस्तितव तथा प्रगति इसी पर निर्भर है। नीति मीमांसा के प्रमुख सिद्धान्त निम्नलिखित है–

lR;kxzg

'सत्याग्रह' का प्रत्यक्ष गांधी के सत्ता एवं मूल्य को सत्य का पर्याय मानने की मूल प्रवृत्ति से सम्बद्ध है। इसका परोक्ष सम्बन्ध उनकी इस मान्यता से भी है कि आत्मा ही सर्वोच्च शक्ति है। 'सत्याग्रह शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए गांधी कहते हैं–

सत्याग्रह का अर्थ है सत्य का आग्रह वह सत्य शक्ति है, किन्तु चूँकि सत्य आत्मा है, इसलिए वह आत्मशक्ति भी है।

vfglk

गांधी अहिंसा को परम धर्म (अहिंसा परमो धर्मः) मानते हैं। अहिंसा का इतना अधिक महत्व इसलिए है कि सत्य, जिसे गांधी ईश्वर मानते हैं, कि अनुभूति प्रेम एवं अहिंसा से ही हो सकती है। उन्हीं के अनुसार–

''जब आप सत्य को ईश्वर के रूप में जानना चाहें तो उसका एकमात्र उपाय है प्रेम और अहिंसा।''– यंग इण्डिया, 31 दिसम्बर 1931 गांधी अहिंसा–सिद्धान्त की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- ''अहिंसा स्वीकारात्मक और भावात्मक है। पशुरूप में मनुष्य हिंसक है किन्तु आत्मा–रूप में वह हिंसक नहीं रह सकता।''
- अहिंसा दुर्बलों का नहीं, वीरों का सिद्धान्त है। अहिंसा का अर्थ अत्याचारी के समक्ष आत्म–समर्पण करना नहीं बल्कि अत्याचारी की इच्छा के विरुद्ध चुनौती देना।
- सच्चे अर्थों में अहिंसक वही व्यक्ति हो सकता है जिसने भय को जीत लिया हो। भीरू तथा असहाय व्यक्ति के लिए हिंसा त्यागने का प्रश्न ही नहीं उठता।
- हिंसा के आधार पर कोई स्थायी वस्तु निर्मित नहीं की जा सकती। यंग इण्डिया, 2 जुलाई 1931
- अहिंसा कर्मठता का दर्शन है, निष्क्रियता का नहीं। सत्याग्रह, जो अहिंसा का मूर्त रूप है, गतिशीलता एवं सक्रियता का सिद्धान्त है।
- अहिंसा न केवल विरोधियों को परास्त करती है, अपितु हमें आंतरिक रूप से अधिक महान बनाकर अन्य मनुष्यों के साथ एकता के सूत्र में बांधती है। वह हमारे अन्दर सर्वोच्च एवं सर्वश्रेष्ठ तत्वों को जाग्रत करती है क्योंकि वह प्रेम पर आधारित है।
- अहिंसा हमारे सम्मुख दुख सहन करने की शक्ति को प्रकट करती है। इसीलिए गांधी अहिंसा को 'सचेतन दुख' कहते हैं।

lekt n'kZu

o.kZ O;oLFkk

गांधी ऋग्वेद के पुरुषसूक्त में प्रतिपादित वर्ण–व्यवस्था के सिद्धान्त को मानते हैं। परन्तु कालान्तर में विकसित जाति–प्रथा के वे कट्टर विरोधी हैं। गांधी समाज के अस्तित्व एवं प्रगति के लिए बौद्धिक, सैनिक, व्यावसायिक तथा शारीरिक श्रम को समान रूप से आवश्यक मानते है। यदि प्रत्येक कर्म को सम्मान की दृष्टि से देखा तथा कर्त्तव्य बुद्धि से किया जाय, तो किसी वर्ग–विशेष के लिए विशेषाधिकारों की समस्या ही नहीं उठेगी।

lekt dh vkn'k vkfFkd O;oLFkk

गांधी के अनुसार– प्रेम, अहिंसा, अस्तेय एवं अपरिग्रह जैसे नैतिक गुणों को स्वीकार कर ही समाज में समता लायी जा सकती है। मानव का आदर्श 'सादा जीवन और उच्च विचार है, न कि उच्च जीवन और सादे विचार।

शिक्षा भारत की राजनीतिक एवं सामाजिक उन्नति के लिए गांधी शिक्षा के पुनरुद्वार को अत्यन्त आवश्यक मानते हैं। उन्हीं के सिद्धान्तों के आधार पर बाद में बुनियादी शिक्षा पद्धति का विकास हुआ। शिक्षा से गांधी का तात्पर्य है मनुष्य के भीतर के श्रेष्ठतम तत्वों की बाह्याभिव्यक्ति। प्रत्येक व्यक्ति कुछ जन्मजात क्षमताओं के साथ पैदा होता है, जिनका पूर्ण विकास उचित शिक्षा द्वारा ही संभव है।

गांजी जी का जीवन ही उनका दर्शन है। पूरा दर्शन उनके अनुभव पर आधारित है। गांजी ने अपने अनुभवों के आधार पर विभिन्न परिकलपनाएं की ओर उनके अनुसार अपने विचारों का एक ढांचा बनाया। उनका जीवन दर्शन कर्म योग का पर्याय है। वह भारतीय परम्परा के बिल्कुल अनुकूल जीवन के परमलक्ष्य मुक्ति में विश्वास रखते हैं तथा कर्म योग की साधना के द्वारा उसकी प्राप्ति पर बल देते हैं।

ppk djs& çf'k{kq ppk djs fd xk/kh n'ku D;k gS A

'kkfUr

अगर मानव इतिहास को देखा जाए तो ये ज्ञात होता है कि जब कभी संकट की स्थिति उत्पन्न हुई या युद्ध के बादल घिर आए या अकाल व महामारियों का प्रकोप हुआ तो मनुष्य द्वारा शान्ति की कामना की गई। भारतीय समाज में शायद ही कोई धार्मिक विधि ऐसी हो, जिसका प्रारम्भ व अंत शांति के मंत्रों से न होता हो, जिसका प्रारम्भ व अंत शांति के मंत्रों से न होता हो। शान्ति प्राप्त करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को शान्ति प्राप्त करनी आवश्यक है, यह शान्ति प्राप्ति की आवश्यक व मूलभूत शर्त है। वैसे भारतीय संस्कृति में शान्ति का मुख्य केन्द्र ''व्यक्ति'' है। अगर व्यक्ति शान्ति प्राप्त कर लेंगे, तो ही सामाजिक शांति की स्थापना हो सकेगी। इसे प्राप्त करने के लिए व्यक्ति (मनुष्य) को उन सब अवस्थाओं का त्याग करना पड़ेगा जो शान्ति के विरुद्ध हो। मानव को प्रेम, सत्य, अहिंसा, त्याग, सहयोग, निःस्वार्थ भाईचारा आदि गुणों का विकास करना होगा। ऐसी मानवीय मूल्यों का विकास करके समाज व राष्ट्र में शान्ति लायी जा सकती है। इसमें मानव के सर्वांगीण विकास को ध्यान में रखते हुए व्यक्ति का सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक विकास हो, इसके लिए समाज में ऐसी व्यवस्था हो जिससे प्रत्येक व्यक्ति को दैनिक आवश्यकताओं की सुविधा उपलब्ध की जाए व किसी प्रकार की हिंसा को स्थान न दिया जाए।

इस विकास में महिलाओं को अनदेखा नहीं किया जा सकता। महिलाओं का विकास किए बिना शान्ति को प्राप्त करना असंभव है। महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने के लिए 1975 के वर्ष को

'महिला वर्ष' 1975 से 1985 का 'महिला दशक' व 1990 के वर्ष को 'बालिका वर्ष' के रूप में घोषित किया गया और महिलाओं को स्वतंत्रता, समानता व जीवन की अन्य सुविधाएं उपलब्ध करवाने का प्रयास किया गया, लेकिन महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने के लिए केवल सरकारी प्रयत्न ही पर्याप्त नहीं। इसके लिए समाज के लोगों व महिलाओं में जागृति लाने व नये दृष्टिकोण से जीवन को समझने की आवश्यकता है।

ppk dj& i.f'k{k ppk dj fd 'kkfUr D;k g l

Hkkjr e 'kkfUr gr nk'kfud fpru

उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में भारत में कई ऐसी महान विभूतियों का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्होंने न केवल देश के पुनर्निर्माण में योग दिया, वरन् भारत में शांति के साथ ही साथ सत्य, प्रेम और अहिंसा के संदेश तथा अपने आदर्शों को विदेशों में भी अंसख्य जिज्ञासुओं तक पहुँचाया। आज समय और प्रसंग के परिवर्तन के साथ ही साथ इन विभूतियों के आदर्शों तथा उनके द्वारा प्रतिपादित चिंतन का महत्व बढ़ गया है। अतः यह आवश्यक है कि उनके शिक्षा सम्बन्धी विचारों से अपने वर्तमान शिक्षा सम्बन्धी दोषों का निवारण करने में सहायता ली जाए। आज भारत में ही नहीं पूरे विश्व में जबकि हिंसात्मक और संहारात्मक शाक्तियाँ मानव सभ्यता को ध्वंस करने को कटिबद्ध हो रही है। शान्ति के प्रतिपादक इन दार्शनिकों की अमर वाणी मानव को कल्याण का मार्ग दिखा सकती है। विश्व के दार्शनिकों में सुकरात, प्लेटो, अरस्तू, हरलॉक, रूसो, हरबार्ट, स्पेंसर, डीवी तथा भारतीय दार्शनिकों में गाँधी, रविन्द्रनाथ टैगेर, दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, अरविन्द आदि के नाम विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इन लोगों ने शिक्षा और दर्शन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। शिक्षा ही वह साधन रहा है जिससे विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का विकास हुआ ऐसी स्थिति में यदि हम शांति की कामना करना चाहते हैं तो शिक्षा को उपयुक्त और जीवनोपयोगी बनाना होगा इसके लिए दार्शनिक चिंतन की सहायता से शिक्षा के उद्‌देश्यों अथवा विचारों में पूर्ण स्पष्टता लाना होगा। दार्शनिक चिंतन ही शिक्षा के अर्थ, उद्‌देश्य, शिक्षण पद्धतियाँ और पाठ्यक्रम आदि को निर्धारित करती आई है।

शिक्षा का उद्‌देश्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करना है किन्तु इसके लिए व्यक्ति के जीवन लक्ष्य का पता होना आवश्यक है। जीवन का लक्ष्य क्या है, उसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है, जीवन की सफलता किस बात में है? आदि प्रश्नों का उत्तर दर्शन देता है, अर्थात् व्यक्ति के जीवन के अंतिम लक्ष्यों का निर्धारण दर्शन द्वारा होता है और उसके इन लक्ष्यों की प्राप्ति शिक्षा के द्वारा होती है। इस दृष्टि से शिक्षा और दर्शन एक दूसरे के पूरक होते है। शिक्षा को दार्शनिक आधार की आवश्यकता पड़ती है क्योंकि जीवन के लक्ष्य को बिना जाने शिक्षा देना निरर्थक है। शिक्षा का लक्ष्य जीवन के लक्ष्य पर निर्भर है। जब जीवन के लक्ष्य का पता नहीं होगा तो शिक्षा किस बात की दी जाएगी। दर्शन जीवन–लक्ष्य का निर्धारण करता है और इसी जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने के उद्‌देश्य से ही शिक्षा के

उद्देश्य, पाठ्यक्रम इत्यादि शैक्षिक क्रियाओं का निर्धारण होता हैं। इन उद्देश्यों की पूर्ति पर ही शिक्षा की सफलता निर्भर करती है।

कुछ दार्शनिकों के विचार निम्नलिखित है–

''दर्शन और शिक्षा एक ही सिक्के के दो पहलू के समान हैं। एक दूसरे में निहित है। दर्शन जीवन का विचारात्मक पक्ष है, जबकि शिक्षा क्रियात्मक पक्ष है।'' – रॉस

''दर्शन की संबंध शिक्षा के लक्ष्यों को निर्धारित करने से है।''– डीवी

''दर्शन की सहायता के बिना शिक्षा की प्रक्रिया सही मार्ग पर नहीं बढ़ सकती। – जेण्टाइल

ppk dj& çf'k{kvk l ppk dj fd n'ku vkj f'k{kk ,d fIDd d nk igyvk d leku gA

यदि शिक्षा को उपयुक्त और जीवनोपयोगी बनाना है तो हमें दार्शनिक चिंतन की सहायता से शिक्षा के उद्देश्यों अथवा विचारों में सहयोग लेना होगा क्योंकि दार्शनिक चिंतन को समझे बिना शैक्षिक विचार अंधकार की ओर ले जा सकते हैं।

जैसा कि कहा गया है–

''वास्तविक शिक्षा का संचालन वास्तविक दार्शनिक ही कर सकता है। – स्पेंसर

''शिक्षा दर्शन का क्रियात्मक पक्ष है। यह दार्शनिक चिंतन का एक सक्रिय पहलू है।'' –सर जॉन एडम्स

''वास्तव में दार्शनिक वही कहा जा सकता है जिसकी हर प्रकार के ज्ञान के विषय में रुचि हो और सीखने के लिए उत्सुक रहे तथा जो (ज्ञान से) कभी संतुष्ट न हो।'' – प्लेटो

''दर्शन को वस्तुओं के विषय में पूर्ण चिन्तन की कला कहा जा सकता है।'' – पैट्रिक

अधिकांश शैक्षिक सिद्धान्त विभिन्न दार्शनिक चिंतन से ही विकसित हुए हैं।

egkRek xk/kh

महात्मा गाँधी उच्च कोटि के समाजसेवी, विचारक, आदर्शवादी तथा आध्यात्मिक सिद्धान्तों के प्रतिपादक थे। गाँधीजी का सम्पूर्ण जीवन स्वयं एक दर्शन था। राजनीतिक, नैतिकता, शिक्षा,

अर्थ–व्यवस्था तथा सामाजिक समस्याओं पर गाँधी जी के विचार इतने मौलिक एवं क्रांतिकारी थे कि पूरे भारत में ही नहीं विश्व में सुख–शान्ति का संदेश मिला। भारतीय चिंतकों ने गाँधीवाद को आध्यात्मिक सामाजिक, राजनैतिक और दार्शनिक सिद्धान्तवाद कहा है। गांधी जी ने धर्म, नैतिकता एवं आध्यात्मिकता पर विशेष बल दिया है।

xk/kh th dk nk'kfud fopkj

- ईश्वर विश्वास– वे ईश्वर को सर्वशक्तिमान एवं सर्वोपरि मानते थे। उनके अनुसार जो ईश्वर को अपने पास समझता है वह कभी नहीं हारता।
- अहिंसा में विश्वास– जहाँ अहिंसा है वहाँ अपार शान्ति अच्छे–बुरे का ज्ञान और आत्म–त्याग की भावना होती है।
- सत्याग्रह– उन्होंने असहयोग आन्दोलन, उपवास, हड़ताल, धरना आदि को सत्याग्रह के अन्तर्गत स्थान दिया है। इससे अन्याय, अत्याचार, अनुशासनहीनता दूर होते हैं। सत्याग्रह का उद्‌देश्य अपने ऊपर यातनाएं सहकर विरोधी का हृदय– परिवर्तन करना होता है।
- कर्म में विश्वास– गांधी जी गीता के उपदेशों में विश्वास करते थे। इन्होंने कर्म के द्वारा कर्त्तव्य और अधिकार का सामंजस्य स्थापित किया है।
- पुनर्जन्म में विश्वास
- साधन और साध्य की श्रेष्ठता और पवित्रता में विश्वास
- धर्म और आध्यात्म में विश्वास
- जीवन का उद्‌देश्य मोक्ष प्राप्त करना
- आदर्श युक्त समाज की स्थापना में विश्वास
- सम्पति के वितरण में समानता का लक्ष्य होना
- विकेन्द्रीकरण में विश्वास– इसमें श्रमिक स्वयं अपना मालिक होता है। अधिक लोगों को रोजगार मिलता है जिससे सभी लोगों का आर्थिक एवं सामाजिक जीवन सुखी होता है।

xk/kh th dk f'k{kk lEcU/kh fopkj

गांधी जी के अनुसार सामाजिक, आर्थिक और नैतिक प्रगति का आधार शिक्षा है।

''साक्षरता न तो शिक्षा का अन्त है और न प्रारम्भ । यह केवल एक साधन है। शिक्षा से उनका अभिप्राय था बच्चों के शरीर, मस्तिष्क और आत्मा में पाये जाने वाले सर्वोत्तम गुणों का चतुर्मुखी विकास।'' – गांधी जी

जिस प्रकार पत्थर कलाकार के हाथ में आने पर सुन्दर कलाकृति का रूप धारण करता है, उसी तरह शिक्षा व्यक्ति की अन्तर्निहित शक्तियों एवं गुणों का प्रादुर्भाव करती है।

f'k{kk dk vk/kkjHkr fl)kUr

- 7 से 14 वर्ष के बच्चों की शिक्षा निःशुल्क तथा अनिवार्य होनी चाहिए।

- शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होनी चाहिए।
- बच्चों में मानवीय गुणों का विकास करना चाहिए।
- शिक्षा द्वारा बच्चों के शरीर, हृदय, मन तथा आत्मा का सांमजस्यपूर्ण विकास करना चाहिए।
- शिक्षा किसी क्राफ्ट से प्रारम्भ होनी चाहिए जिससे बच्चे अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं कर सके।

f'k{kk dk mn~ns';

- बच्चों को जीवकोपार्जन के योग्य बनाना।
- उनमें चरित्र का निर्माण एवं विकास करना।
- अपनी संस्कृति अपनाने का प्रशिक्षण देना।
- बच्चों की शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक शक्तियों का विकास करना।
- आत्मा को उच्चतर जीवन की ओर ले जाना।
- वास्तविकता का अनुभव, ईश्वर और आत्मानुभूति का ज्ञान।

ikB;Øe

पाठ्यक्रम सदैव बच्चों के वातावरण के अनुकूल होना चाहिए क्योंकि समन्वित पाठ्यक्रम ही बच्चों को स्वस्थ, बुद्धिमान, विवेकशील, भावात्मक दृष्टि से मजबूत तथा जीवकोपार्जन में सफल बना सकता है। पाठ्यक्रम क्रियाप्रधान हो अर्थात् किसी क्राफ्ट, जैसे कृषि, कताई–बुनाई, गन्ने का कार्य, लकड़ी एवं रस्सी का कार्य इत्यादि शामिल होना चाहिए।

नवीन पाठ्यक्रम में शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान दिया है जिसमें हस्तकला एवं उद्योग, मातृभाषा, सामान्य गणित, सामाजिक विषय, सामान्य विज्ञान, कला, संगीत, चित्रकला, स्वास्थ्य विज्ञान, नैतिक शिक्षा आदि पाठ्य विषयों को जगह दी गई है जिससे बच्चों का चतुर्मुखी विकास हो सके।

f'k{k.k fof/k

- शिक्षण का माध्यम मातृभाषा होनी चाहिए।
- शिक्षण पुस्तकीय न होकर क्राफ्ट केन्द्रित होना चाहिए।
- क्राफ्ट केन्द्रित शिक्षण विधि में क्रिया एवं अनुभव पर जोर दिया गया है।

अर्थात शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो बच्चों को आत्मनिर्भर बना सके।

f'k{kd

गांधी जी बच्चों के चतुर्मुखी विकास के लिए शिक्षक में निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक मानते हैं–

- विषय पर पूरी पकड़ हो।

- नवीन एवं रूचिकर शिक्षण विधियाँ प्रयुक्त करनी चाहिए।
- चरित्रवान होना चाहिए।

गांधी जी का दार्शनिक चिंतन आज की आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त होगा तथा मानव आत्मा की सर्वोच्च आकांक्षाओं को संतुष्ट करेगा। एवं भारत में शांति का वातावरण फैलेगा।

Lokeh foo:dkuUn

स्वामी विवेकानन्द का जन्म कलकत्ता में सन् 1863 में हुआ था। स्वामी जी ने अपने सम्पूर्ण जीवन में अनेकानेक महत्वपूर्ण कार्य किए। इनके द्वारा 1 मई, 1897 ई0 में 'रामकृष्ण मिशन' की स्थापना की गई। इनके मुख्य रूप से तीन कार्य हैं–

- गरीबों की यथासम्भव सहायता
- स्वामी रामकृष्ण की शिक्षाओं एवं वेदान्त का प्रभावशाली ढंग से प्रचार
- जनकल्याण के लिए शिक्षा

धार्मिक तथा सामाजिक पुनर्जागरण के मनीषियों में स्वामी जी का अत्याधिक महत्वपूर्ण स्थान है, जिन्होंने अपनी साधना, विचार तथा व्यक्तित्व से अपने देश को ही नहीं बल्कि पूरे संसार को प्रकाशित किया।

f'k{kk dk vFk

> ''शिक्षा मनुष्य के भीतर निहित पूर्णता का विकास है। यह वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति अपनी समस्त सम्भावनाओं की पूर्णता प्राप्त कर सकता है।''– स्वामी विवेकानन्द

f'k{kk n'ku d vk/kkjHkr fl)kUr

- पुस्तकों का अध्ययन ही शिक्षा नहीं है।
- शिक्षा बच्चों का शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक तथा नैतिक विकास करती हैं
- पाठ्यक्रम में उन सभी विषयों को समाहित किया जाए जिनके अध्ययन से बच्चों का भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास हो।
- चित्र की एकाग्रता की शक्ति प्राप्त करने की कुंजी है।
- मन, वचन तथा कर्म की शुद्धि आत्मनियन्त्रण है।
- धार्मिक शिक्षा को पुस्तकों की अपेक्षा व्यवहार, आचरण तथा संस्कारों के द्वारा दिया जाए।
- अध्यापक तथा बच्चों का सम्बन्ध अधिक से अधिक निकट का हो।
- जनसाधारण में शिक्षा का प्रचार किया जाए।
- तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जाए जिससे औद्योगिक उन्नति हो और भारत की आर्थिक दशा सुधर जाए एवं शांति की स्थापना हो।

f'k{kk d mnn';

> स्वामी जी के अनुसार– ''सभी शिक्षाओं का उद्देश्य मानव निर्माण है। मानव शब्द मानवीय गुणों का द्योतक है। इसका स्वरूप सामाजिक है। पौरूष, साहस, सहयोग, दूसरे के प्रति सहानुभूति मानवोचित गुण है।''

स्वामी जी के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

- व्यक्तित्व में मनुष्यत्व का विकास
- आन्तरिक पूर्णता का बाह्य प्रकाश
- समाजसेवा की धारणा का विकास
- शारीरिक विकास
- जीवकोपार्जन का उद्देश्य
- राष्ट्रीय एकता एवं विश्वबंधुत्व का विकास
- त्याग की भावना
- पुस्तकीय ज्ञान का सीमित महत्व
- बच्चों में आत्मविश्वास की भावना पैदा करना
- जीवन में व्यवहारिक पक्ष के प्रति जागरूकता विकसित करना

ikB;Øe

उनका पाठ्यक्रम दो भागों में विभक्त है–

ykfdd ikB;Øe

इसके अन्तर्गत भौतिक सुख एवं समृद्ध से सम्बन्धित विषय जैसे– भाषा, विज्ञान, मनोविज्ञान, तकनीकी ज्ञान, व्यवसायिक ज्ञान, इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, गणित, राजनीति, खेलकूद आदि का समावेश होता है।

vk/;kfRed ikB;Øe

इसमें धर्म, दर्शन, पुराण, भजन, कीर्तन आदि समाहित होता है।

f'k{k.k i)fr

- अनुकरण विधि
- व्याख्यान विधि
- धर्म एवं योग विधि
- केन्द्रीयकरण विधि

- तर्क एवं विचार–विमर्श विधि
- निर्देशन एवं परामर्श विधि
- क्रियात्मक एवं व्यवहारिक विधि
- स्वाध्याय विधि

f'k{kk d: dk;!

- शिक्षा महान अनुभूतियों का समन्वय करने में सहायता कर सकती है।
- शिक्षा मानव मूल्य के समन्वय में सहायता कर सकती है।

शिक्षा को वे भारत के पुनरूस्थान का महत्वपूर्ण एवं शाक्तिशाली माध्यम मानते थे। शिक्षा इस प्रकार की हो कि बच्चों को अपने घर और देश से परिचित कराने से प्रारम्भ होकर अन्त में सत्य, विश्व–प्रेम और विश्व–बंधुत्व की शिक्षा दे। भारतीय शिक्षा पूर्ण रूप से राष्ट्रीय भावना से उत्प्रेरित हो। वे शिक्षा द्वारा एक ऐसे नवीन भारत का निर्माण करना चाहते थे जिसे अपनी सभ्यता और संस्कृति पर गर्व हो और शिक्षित समाज में शांति की स्थापना हो सके।

'kkfUr dh ifjHkk"kk

शान्ति विचारकों व शांति संशोधकों ने अलग–अलग परिस्थितियों में शांति को परिभाषित किया है जो निम्नवत् है–

''मनुष्य का अस्तित्व मानव सम्बन्धों व समाज रचना पर आधारित है। व्यक्ति के भीतर व व्यक्ति के बीच में, समाज के भीतर या समाज के बीच में तथा विश्व के भीतर की व्यवस्था का नाम शान्ति है।'' – जोहान गाल्टूंग

^^'kkfUr dk eryc] 'kks"k.k dk vHkkoA** & xka/kh th

''राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर युद्ध, हिंसा व उग्रवादिता की अनुपस्थिति।'' –कई विचारकों के अनुसार

''शान्ति का अर्थ'' मन की स्वस्थता''। – टाकेशी ईसीडा भारतीय संस्कृति के संदर्भ में

जुलाई 1985 में नैरोबी में संयुक्त राष्ट्र का विश्वअधिवेशन हुआ। इसमें महिला विकास व शान्ति के विषय पर गहनता से विचार–विमर्श हुआ।

l;qDr jk"Vªh; la?k us o"kZ 1986 dks vUrjk"Vªh; 'kkfUr o"kZ ?kksf"kr fd;kA

आधुनिक विचारकों ने शान्ति स्थापित करने के लिए निम्नलिखित पहलुओं को अपनाने का सुझाव दिया है–

- साम्राज्यवादी आर्थिक नीतियों का त्याग करके स्थानीय आवश्यकताओं के आधार पर आर्थिक नीतियों का विकास करना।
- गरीबी व भुखमरी दूर करने के सकारात्मक प्रयास करना।
- विकासशील राष्ट्रों को शोषण व अन्याय का संगठित होकर सामना करना चाहिए।
- विकासशील राष्ट्रों को तकनीकी की ज्ञान अपनाने के लिए अधिक सहायता देना।
- प्राकृतिक सम्पदा का आवश्यकता के अनुसार विकास कार्यों में उपयोग किया जाए, ताकि भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक सम्पदा बची रहे।

ppkZ djsa& प्रशिक्षक प्रशिक्षुओं से चर्चा करें कि शान्ति स्थापित करने के लिए किन सुझावों को अपनाया जा सकता है।

'kkfUr ds fy, f'k{kk dk egRo dk;Z {ks=

शिक्षा द्वारा बच्चों में बौद्धिक, शारीरिक, नैतिक एवं सामाजिक भावना का विकास किया जा सकता है जिससे उनका सर्वागीण विकास हो सके और शान्ति के मार्ग पर अग्रसर हो सके। जिससे समाज एवं राष्ट्र के उत्थान में सक्रिय सहभागी बनें।

1. बच्चों में नैतिक मूल्यों का विकास करना जिससे उनको शान्ति और सेवा का पाठ सिखाया जा सके।

2. विद्यालय, समाज का वातावरण मानवीय सम्बन्धों से पूर्ण होना चाहिए।

3. विद्यार्थियों में अपनी संस्कृति एवं सभ्यता की रक्षा के लिए सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करना।

4. पाठ्यक्रम में उन सभी विषयों को स्थान दिया जाना चाहिए जो बालकों के व्यवहारिक जीवन को सफल बना सकें।

5. शान्तिपूर्ण जीवन शैली हेतु प्रेरित करना।

6. शान्ति शिक्षा का मुख्य ध्येय छात्रों का सर्वांगीण विकास करना है।

विद्यालय ही वह स्थान है जो विद्यार्थियों को अनुशासित व व्यवस्थित समाज का सदस्य बनने की ओर उन्मुख करता है। अतः सम्पूर्ण विद्यालयीय पाठ्यचर्या में शान्ति को सम्मिलति करके बच्चों में असमानता, अविश्वास, असहयोग, स्वार्थमय वातावरण आदि समस्याओं को दूर करके शान्ति के माहौल बनाते हुए उन्हें निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर किया जा सकता है।

ppk djs& i.f'k{k ppk djs fd 'kkfUr dk e[; dk;l {k= D;k gS I

vH;kl ç'u

cgqfodYih; i'u

1. अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति वर्ष घोषित हुआ–

क. 1886	ख. 1986
ग. 1996	घ. इनमें से कोई नहीं

2. स्वामी विवेकानन्द का जन्म हुआ था–

क. 1663	ख. 1660
ग. 1863	घ. 1963

vfry?kq mRrjh; i'u

3. हिंसा क्या है ?

4. शांति की परिभाषा लिखो।

y?kq mRrjh; i'u

5. गांधी जी के अनुसार पाठ्यक्रम कैसा होना चाहिए ?

6. स्वामी विवेकानन्द की शिक्षण विधियों का वर्णन करिए।

nh?kZ mRrjh; i'u

7. मीडिया की हिसा में क्या भूमिका होती है ? उल्लेख करो ?

8. भारत में शांति हेतु किसी दार्शनिक के विचारो का वर्णन करो ?

तनाव प्रबन्धन

आज की भागती–दौड़ती जिदंगी में मानसिक तनाव जीवन का हिस्सा बनता जा रहा चाहे वे छोटे बच्चे हो युवा हो या अन्य आयु वर्ग के लोग। इस प्रतियोगिता पूर्ण जिदंगी में सभी किसी न किसी रूप में मानसिक तनाव से ग्रसित हो जाते है। जिसका दुष्प्रभाव उनके शारीरिक एवं मानसिक रूप में हो सकता है। व्यक्ति जरा सी बात से चितिंत एवं व्यथित हो जाता है एवं अनेकों प्रकार की बीमारियों से ग्रसित हो सकता है। व्यक्ति जीवन में आने वाली समस्याओं और परेशानियों से किस प्रकार से सामना कर अपने को मजबूत कर सकता है? आइये विचार करें–

व्यक्ति के जीवन में तनाव अवश्य संभावी है। लेकिन वह योग एवं प्राणायाम के माध्यम से साथ योजनाबद्ध कार्य प्रणाली के माध्यम से तनाव पर विजय प्राप्त कर सकता है।

e[; f'k{k.k fcUn

- अष्टांग योग
- यम
- नियम
- प्राणायाम
- प्रत्याहार
- धारणा
- ध्यान
- समाधि

ruko d çe[k dkj.k

- असफलता का भय
- असुरक्षा की भावना
- निराशावादी दृष्टिकोण
- मिथ्या विश्वास और पूर्वाग्रह
- दुर्घटना/बीमारी का प्रभाव
- क्षमता से ऊपर आकांक्षा स्तर होना
- क्षमता से अधिक कार्यभार
- सांवेगिक अस्थिरता
- आलोचना के प्रति चिन्ता
- अकेलापन
- भविष्य की चिंता
- नकारात्मक घटनाओं का प्रभाव
- हीनता या श्रेष्ठता की भावना
- धैर्य/आत्मविश्वास की कमी
- सहनशीलता का अभाव
- परिस्थितियों से तालमेल न बिठा पाना।

ruko d: çdkj

तनाव को हम सामान्यतः नकारात्मक रूप में ही लेते हैं, किन्तु इसका सकारात्मक पक्ष भी होता है। तनाव मुख्यतः दो प्रकार का होता है–

1- ldkjkRed ruko

इससे व्यक्ति की रचनात्मक शाक्ति एवं कार्य निष्पादन क्षमता में वृद्धि होती है तथा उसे सम्मान एवं आत्मसंतोष मिलता है।

2- udkjkRed ruko

इससे व्यक्ति की रचनात्मकता एवं कार्य निष्पादन क्षमता का ह्रास होता है तथा व्यक्ति में असन्तोष व निराशा के भाव उत्पन्न होते हैं।

ruko d: çHkko

यदि हम शारीरिक व मानकिस दृष्टि से स्वस्थ्य नहीं रहेंगे तो हम अपने कार्यों को सुचारू रूप से निर्धारित समय में सम्पादित नहीं कर पाएंगे। तनावग्रस्त होने से व्यक्ति को अनेक प्रकार के मनोदैहिक सांवेगिक असन्तुलन का सामना करना पड़ता है। व्यक्ति पर तनाव के विविध प्रभाव दष्टिगोचर होते हैं।

LokLF; ij iHkko	l:LFkk@l:xBu ij iHkko
• हृदयगति पर	• गुणवत्ता पर
• रक्त चाप पर	• नियोजन एवं प्रबन्धन पर
• पाचन शाक्ति पर	• संस्था प्रमुख/अधीनस्थों/प्रशिक्षुओं पर
• मांसपेशियों में तनाव	• भावी कार्यों के निष्पादन पर
• सिर दर्द/माइग्रेन, उदरविकार	• कृत कार्यों के परिणाम पर
• स्पांडलाइटिस, पीठ दर्द	• भविष्य की रणनीतियों पर
• अतिरिक्त शक्ति की कमी	

ruko çcU/k

तनाव का हमारे मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है जिसके कारण मन अशांत हो जाता जिसके कारण कार्य करने की क्षमता प्रभावित होती है। अतः यह आवश्यक है कि हमें तनाव उत्पन्न करने वाली स्थितियों से बचने का प्रयास करना चाहिए, साथ ही यदि ऐसी स्थिति आए भी तो हमें उसका पूरी

दृढ़ता व संकल्पशक्ति के साथ सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए। तभी हम अपने जीवन की विपरीत परिस्थितियाँ पर भी विजय प्राप्त कर सकते हैं।

ruko dk fdl çdkj nj fd;k tk ldrk

- तनाव के कारणों का पता लगाना चाहिए तथा विश्लेषण कर उसमें समाधान खोजना चाहिए।
- लक्ष्य का निर्धारण।
- कुशल समय–प्रबन्धन।
- शांत रहना।
- पारस्परिक सहयोग से कार्य करना चाहे वह घर हो या दफ्तर।
- समाज में लोगों से मिलना–जुलना।
- प्रेरणादायक सहित्य का अध्यापन।
- नकारात्मक सोच से बचे व सकारात्मक दृष्टिकोण रखे।
- आत्मविश्वास एवं धैर्य।
- तनाव होने पर अपने आप को व्यस्त रखें।
- कार्यों की प्राथमिकता का निर्धारण व उन्हें ससमय पूर्ण करना।
- प्रसन्नचित रहना।
- नियमित शारीरिक व्यायाम, योग प्राणायाम करें।

v"Vkx ;kx

योग हमारी भारतीय संस्कृति की सर्वोत्तम देन है। योग के निरन्तर अभ्यास से भी स्वास्थ्य शरीर एवं एक्राग्रता को पाया जा सकता है। योग केवल योगासन या प्राणायाम या कलाबाजी नहीं है बल्कि जीवन जीने की कला व अनुशासन है जो साधना, श्रद्धा और विश्वास के सहारे शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक भावात्मक और आध्यात्मिक सभी स्तरों पर व्यक्ति के व्यक्तित्व में सर्वतोमुखी विकास करता है। प्रकृति हमें कर्म करना सिखाती है और योग से कर्म शक्ति का उदय होता है 'योगाश्चित वृत्ति निरोध': अर्थात् चित्र की वृत्तियों का विरोध करना ही योग हैं योग शब्द संस्कृत के युज् धातु से बना है जिसका अर्थ है जोड़ना, संयोग अथवा मिलाना है। इस प्रकार आत्मा–परमात्मा का जो मिलन संयोग और एकीकरण है वह योग है, परमशन्ति का मार्ग एवं दुखों से बचने व सुख प्राप्त करने का उपाय है। भगवान श्रीकृष्ण की गीता के अनुसार *^;kx de/l/ dk'kye** अर्थात् कर्मों के करने मेंजो कुशलता है वही योग है।

योग शास्त्र के प्रणेता महर्षि पतंजलि ने योगशास्त्र के साधनपाद में अष्टांग योग का प्रतिपादन किया जो समाधि की सिद्धि के लिए क्रमशः किये जाने वाला साधन है। पतंजलि के अष्टांग योग के

आठ अंग है यथा— 1. यम 2. नियम 3. आसन 4. प्राणायाम 5. प्रव्याहार 6. धारणा 7. ध्यान 8. समाधि है। इसमें प्रथम पाँच बहिरंग तथा शेष तीन को अंतरंग योग कहा गया है।

;e

यम अष्टांग योग का प्रथम भाग है जो योग का आधारशिला है। यम का अर्थ है 'चित को धर्म में स्थिर रखने का साधन' अर्थात् यम के द्वारा ही धर्म में चित लगाया जा सकता है। यम वह साधन है जिसमें योगी बाह्यमुखता से अन्तर्मुखता की ओर बढ़ता है। यम की साधना से व्यावहारिक जीवन सात्विक एवं दिव्य बनता है। राग, द्वेष, क्लेश दूर होते हैं। यमों का सम्बंध केवल व्यक्ति से नहीं अपितु सारे मनुष्य समाज से है। भगवत पुराण के अनुसार यम के 12 अंग हैं तो पराशर संहिता के अनुसार दस अंग है, लेकिन महर्षि पतंजलि के अनुसार मनुष्य किसी जाति, देश, अवस्था, पद्धति का क्यों न हो, यदि इसे मनुष्य समाज में रहना है तब उसके लिए 5 यम का सदा आचरण करना होगा।

1- vfglk& यम के सबसे मुख्य अंग अहिंसा का अर्थ है 'किसी को दुखः न देना' बैर भाव छोड़कर प्रेमपूर्ण व्यवहार करना। साधारण रूप से किसी को शारीरिक, मानसिक या सामाजिक या सामाजिक कष्ट न देना, किसी को यातना न देना तथा किसी प्रकार की हिंसा न करना आदि सब अहिंसा की ही परिधि में आते हैं।

2- lR;& यम के दूसरे अंग सत्य का अर्थ है। 'यथार्थ या वास्तविक' अर्थात मन, वचन, कर्म में एकता ही सत्य है। किसी बात को हम जैसा देखते हैं, सुनते हैं, अनुभव करते हैं उसी रूप में समझना, अभिव्यक्त करना और आचरण में ढालना ही सत्य है। अतः हमें किसी भी स्थिति में सत्य का परित्याग नहीं करना चाहिए।

3- vLr;& यम के तीसरे अंक अस्तेय का अर्थ है। 'चोरी न करना' अर्थात मन, वचन एवं कर्म से पराई वस्तु की इच्छा न करना ही अस्तेय है। अस्तेय यम अहिंसा भाव की पुष्टि के लिए है।

4- cãp;& यम के चौथे अंग ब्रह्मचर्य का अर्थ है जननेन्द्रिया पर नियन्त्रण। ब्रह्मचर्य ही उत्कृष्ट तप है जो मोक्ष तक पहुँचने का साधन है।

5- vifjxg& यम के पाँचवें अंग अपरिग्रह का अर्थ है 'संग्रह या अर्थ संचय न करना' अर्थात धन, सम्पति अथवा भोग वस्तुओं को अपनी आवश्यकता से अधिक संचय नहीं करना चाहिए। अपरिग्रह व्रत का पालन करने से शारीरिक और मानसिक बल तथा स्मरण शाक्ति में वृद्धि होती है।

fu;e

समाज द्वारा स्वीकृत नियमों के अनुसार आचरण करना ही अष्टांग योग का दूसरा महत्वपूर्ण अंग नियम है। साधक इन नियमों पर चलकर अपने व समाज के मध्य सामाजिक बौद्धिक व आध्यात्मिक समन्वय स्थापित कर लेता है। योगाचार्यो के अनुसार नियम का पहला अंग।

1- 'kkp& जिसका अर्थ है शरीर व मन की स्वच्छता एवं पवित्रता। सात्विक भोजन, षटकर्म (नेति, धौती, बस्ति, कपाल भाति, त्राटक, न्यौली) आदि बाह्म शौच है वहीं बुरे विचारों को त्याग कर भजन, कीर्तन, सत्संग आदि आन्तरिक शौच है जिससे साधक को रजोगुण, तमोगुण त्याग करने पर सात्विक मन की प्राप्ति होती है।

2- lUrks"k& अपने कर्म एवं सामर्थ्य द्वारा जो भी मिल जाए उसमें प्रसन्नचित्र रहना ही सन्तोष है। इसमें साधक अपनी इच्छाओं पर अंकुश लगा लेता है, जिससे उसे सन्तुष्टि की प्राप्ति होती है।

3- ri& शरीर, प्राण, इन्द्रियों और मन को सामर्थ्य, सहनशीलता द्वारा वशीकार करना ही तप है। वातावरण के अनुकूल स्वयं को परिस्थितियों के अनुरूप ढालना ही तप है।

4- Lok/;k;& ज्ञान की प्राप्ति व ज्ञान का अर्जन ही स्वाध्याय है अर्थात नित्य ओम, गायत्री मंत्र आदि अन्य पवित्र मन्त्रों का जय तथा वेद उपनिषद, पुराण आदि शास्त्रों का अध्ययन मनन आदि ही स्वाध्याय है जिससे आत्मा की शुद्धि होती है।

5- bZ'oj iz.f.k/kku& जिसका अर्थ है मन, वचन एवं कर्म द्वारा ईश्वर को सम्पूर्ण समर्पण करना, जिससे ईष्ट देवता का साक्षात् होता है।

vklu

आसन प्रारम्भ करने से पूर्व यम–नियम का पालन करना अत्यंत जरूरी होता है। यम नियम का पालन कर ही आसनों का यथोचित लाभ उठाया जा सकता है। स्थिर सुख मासनम् जिसमें शरीर स्थिर रहे और मन को सुख की प्राप्ति हो, शरीर की इसी स्थिति को आसान कहते हैं।

çk.kk;ke

प्राणायाम शरीर विज्ञान की दृष्टि से श्वसन क्रिया मानव जीवन के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। प्राणायाम का शाब्दिक अर्थ है प्राण का नियंत्रण करना। प्राणायाम द्वारा हम अपने शरीर में व्याप्त प्राणाशक्ति को उत्प्रेरित, संचरित, नियमित तथा संतुलित करते है।

çR;kgkj

प्रति+ आहार–प्रति का अर्थ विपरीत और आहार का अर्थ भोजन अर्थात् प्रत्याहार, जिसका अर्थ है इच्छारूपी भोजन पर नियंत्रण करना। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं इन्द्रियों द्वारा अपने–अपने इच्छित विषयों का भोग न करना ही प्रत्याहार है। इसमें इन्द्रियों को बाह्य विषयों से हटाकर उन्हें अन्तर्मुख करना ही प्रत्याहार है।

/kkj.kk

धारणा का शाब्दिक अर्थ है धारण अर्थात चित्र की वृत्तियों को सम्भालना। यह ध्यान की ओर पहला कदम है जिससे साधक ध्येय वस्तु को मन के समक्ष स्थिर रखता है। यह मानसिक एकाग्रता का व्यायाम है। शरीर जिन पाँच तत्वों से मिलकर बना है उनका ध्यान कर मन में निश्चल रूप से धारण करना ही धारणा है। भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है जो व्यक्ति धारणाओं का अभ्यास करने में सिद्ध हो जाता है वह व्यक्ति मोक्ष की प्राप्ति कर लेता है अर्थात सुख–दुख के बन्धन से मुक्त हो जाता है।

/;ku

चिन्तन व मनन करना ही ध्यान है अर्थात् अपनी चित्रवृत्ति को जिस विषय में धारणा द्वारा लगाये रहते है और उसी विषय में निरंतर लगाये रहना ही ध्यान है। इसमें एकाग्रता की धारा निर्विध्न और सहज होती है। यह समाधि, सिद्ध के पहले की अवस्था है। महर्षि पतंजलि के अनुसार जहाँ चित्र को लगाया जाए उसमें वृत्रि का लगातार चलना ही ध्यान है।

lekf/k

जब अंहकारिक चेतना से ऊपर उठकर ध्यान हरा हो जाता है और वह अपने अति उच्च शिखर पर पहुँच जाए तो वह समाधि की अवस्था में प्रवेश करता है। इस स्थिति में केवल ध्येय स्वरूप का ही मान रहता है।

अतः यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारण, ध्यान, समाधि से अपना व्यक्तित्व अत्यनत उन्नत होता है। मन को नियंत्रित करने के लिए यह प्रत्यक्ष साधन है। इससे मन व शरीर तनाव रहित हो जाता है।

vH;kl ç'u

1. तनाव के प्रकार तथा तनाव होने के कारण बताइए?

2. तनाव को कैस दूर किया जा सकता है ?

3. अष्टांग योग किसे कहते है ?

4. यम से क्या तात्पर्य है ?

5. आसन किसे कहते है ?

6. ध्यान से क्या ताप्यर्य है ?

मानवाधिकार और लोकतंत्र

मानवाअधिकार वे अधिकार हैं जो हमारी प्रकृति या स्वाभाव में निहित हैं। इनके अभाव में हम मानव के रूप में अपना जीवन व्यतीत नहीं कर सकते हैं। मानव अधिकार और मौलिक स्वतन्त्रताएँ हमको पूर्णरूप से विकसित होने के लिए अवसर प्रदान करती हैं। साथ ही इनके द्वारा मानवीय गुणों, प्रतिभाओं तथा चेतना का सदुप्रयोग किया जाता है। यह अधिकार मानवता पर आधारित है। मानवाधिकार आधुनिक जीवन–जगत का एक महत्वपूर्ण विषय बन गया है। सहज अर्थ में ये ऐसे अधिकारों को बोध कराते है जो किसी व्यक्ति केवल इसलिए प्रदत्त होते है कि उसने मानव जाति में जन्म लिया है। इस अवधारणा के अन्तस्थल में यह भाव स्पष्ट है कि मानव–मानव के बीच राष्ट्र–राज्य, धर्म, जाति, रंग–रूप या ऐसे ही अन्य किसी आधार पर भेद नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार मानव का जन्मजात गौरव और समानता मानवाधिकार का केन्द्रिय तत्व बनते है कल, आज और कल की दृष्टि से मानवाधिकार के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, नैतिक, आध्यात्मिक तथा विधिक आदि कई महत्वपूर्ण पक्ष बनते है, किन्तु वर्तमान में अधिकांश लोग इसके केवल विधिक पक्ष तक सीमित रह गए है। मानवाधिकार की वर्तमान अवधारणा का प्रादुर्भाव अन्तर्राष्ट्रीय विधि के क्षेत्र में प्रत्यक्ष रूप में देखने को मिलता है जिसका लक्ष्य अपने देश या राष्ट्र में प्रत्येक नागरिक को उसके देश या राष्ट्र में प्राप्त मौलिक और अपृथक्करणीय अधिकारों की प्राचीन अवधारणा पर अवलम्बित है जिसे नैसर्गिक विधि और नैसर्गिक अधिकारों के रूप में जानते हैं।

e[; f'k{k.k fcUnq
• मानवाधिकार और लोकतंत्र

अन्तर्राष्ट्रीय विधि से प्रारम्भ मानवाधिकार का प्रश्न संयुक्त राष्ट्र चार्टर की प्रस्तावना में मानवाधिकारों के प्रति विश्वास प्रगाढ़ करने तथा संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अनुच्छेद (1) में मानवाधिकार के प्रति सम्मान की भावना को प्रोत्साहित करने एवं मानवाधिकार के विकास के संकल्प से जुड़ा है। संयुक्त राष्ट्र की मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा–1948 में मानवाधिकारों के विविध आयामों को प्रकट करते हुए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उन्हें स्वीकार करने का प्रावधान किया गया। इसके बाद कई अर्न्तराष्ट्रीय या बहुराष्ट्रीय प्रतिज्ञापत्रों तथा संधियों में इसे अंगीकृत किया गया। मानवाधिकार की यह शुरूआत 20वीं सदी में मानवजाति द्वारा झेली गयी विभीषिकाओं का परिणाम है। वर्ष 1914 से 1918 तक प्रथम विश्वयुद्ध तथा उसके बाद इसी सदी के चौथे दशक में घोर आर्थिक मंदी, भुखमरी, बेरोजगारी, फासीवाद, साम्राज्यवाद का अत्याचार, द्वितीय विश्वयुद्ध तथा हिरोशिभा तथा नागासाकी पर अणुबम फेंककर मानवजाति को समाप्त कर देने का घृणित प्रयास तथा पिछड़े अन्तर्राष्ट्रीय समाज के शोषण के प्रतिकार या उद्धारस्वरूप मानवाधिकार की यह धारणा अवतरित हुई है। भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते हुए उसने द्वितीय विश्व के पूर्व तथा उसके दौरान फासीवादी अतिक्रमण और बर्बरता से त्रस्त लोगों को अपनी सहानुभूति और समर्थन दिया। स्वतंत्रता आंदोलन के आदर्शों को भारत के संविधान में स्थान देने का प्रत्यत्न किया गया, जिसकी रचना का कार्य भारतीय संविधान सभा ने

दिसम्बर 1946 में ही, जब भारत स्वतंत्र भी नहीं हुआ था, आरम्भ कर दिया था। 26 नवम्बर 1949 को यह कार्य सम्पन्न हो गया। संविधान की उद्देशिका तथा उसके भाग 3 में दिए गए मूल अधिकारों और भाग 4 में विहित राज्य की नीति के निदेशक तत्वों को इस संविधान का सार–तत्व कहा गया है और इनमें मानवाधिकारों की सार्वजनीन घोषणा तथा नागरिक और राजनीतिक अधिकारों एवं आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों से सम्बंधित प्रसंविदाओं के आधारभूत सिद्धान्त प्रतिबिबित हुए है।

भारतीय संविधान और कानून की विभिन्न व्यवस्थाओं के साथ मानवाधिकारों की सार्वजानिक घोषणा के अलग–अलग अनुच्छेदों से तालिका नीचे दी जा रही है।

Ø- l-	ekuokf/kdkjksa dh lkoZtuhu ?kks"k.kk	vuqPNsn l0	Hkkjrh; lafo/kku vkSj dkuwu dh 0;oLFkk,a
1	सभी मनुष्य जन्म से स्वतंत्र और समान गरिमा तथा अधिकारों से युक्त है।	14	राज्य भारत के राज्यक्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से या विधियों के समान संरक्षण से वांचित नहीं करेगा।
2.	नस्ल, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक या अन्य विचार, राष्ट्रीय या सामाजिक मूल, सम्पत्ति, जन्म या अन्य स्थिति से सम्बंधित किसी भी प्रकार के विभेद के बिना प्रत्येक मनुष्य इस घोषणा में वर्णित अधिकारों और स्वतंत्रताओं का हकदार है।	15	राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।
3	प्रत्येक मनुष्य को जीवन, स्वतंत्रता और अपने शरीर की सुरक्षा का अधिकार हैं।	21	किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैनिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।
4	किसी को दास बनाकर या दासता की स्थिति में नहीं रखा जाएगा।	23	मानव का दुर्व्यापार और बेगार तथा इसी प्रकार की अन्य बलात् श्रम प्रतिविद्ध किया जाता है और इस उपबन्ध का कोई भी उल्लंघन अपराध होगा, जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा।
5	किसी को भी यातना नहीं दी जाएगी।	21	महाराष्ट्र राज्य बनाम रविकांत एस0पाटिल(1991) 2 एस0सी0सी0 373– अभियोजना धीन कैदी को हथकड़ी पहना कर खुलेआम ले जाना अनु0 21 के अधीन प्रदत्त अधिकारों का उल्लघंन करार

			दिया गया। मेनका गांधी बनाम भारतीय संघ (1978)1 एस0सी0सी0 248– अनुच्छेद 21 में आने वाले पद ''दैनिक स्वतंत्रता '' बहुत व्यापक अर्थवाला पद है और उसमें उन विविध प्रकार के अधिकारों का समावेश है जिनसे मनुष्य की व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रचना होती है, जिसमें उसके शरीर की सुरक्षा भी शमिल है।
6	प्रत्येक मनुष्य को यह अधिकार है कि उसे हर जगह कानून की दृष्टि में एक व्यक्ति के रूप में मान्य किया जाएगा।	14 एवं 21	14 एवं 21 अनुच्छेद 14 के अनुसार
7	कानून की दृष्टि में सभी समान हैं और बिना किसी विभेद के कानून की समान सुरक्षा प्राप्त करने के अधिकारी हैं।	14	पूर्वोद्धत
8	प्रत्येक मनुष्य को उसके मूल अधिकारों का उल्लंघन करने वाली कार्यवाहयों का प्रतिकार कराने का अधिकार है।	32	(1) संविधान के भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए समुचित कार्यवाहियों द्वारा उच्चतम न्यायालय में समावेदन करने का अधिकार प्रत्याभूत किया जाता है। (2) इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी को प्रवर्तित कराने के लिये उच्चतम न्यायालय को ऐसे निर्देश या आदेश या रिट, जिनके अन्तर्गत बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार–पृच्छा और उत्प्रेषण रिट है, जो भी समुचित हो, निकालने की शक्ति होगी। (4) इस संविधान द्वारा अन्यथा उपबंधित के सिवाय, इस अनुच्छेद द्वारा प्रत्याभूत अधिकार को निलम्बित नहीं किया जाएगा। 226 (1) अनुच्छेद 32 में किसी बात के होते हुए भी, प्रत्येक उच्च न्यायालय को उन राज्य क्षेत्रों में

			सर्वत्र, जिनके सम्बंध में वह अपनी अधिकारिता का प्रयोग करता है, भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी को प्रवर्तित कराने के लिए और किसी अन्य प्रायोजन के लिए उन राज्य–क्षेत्रों के भीतर किसी व्यक्ति या प्राधिकारी को या समुचित मामलों में किसी सरकार को ऐसे निर्देश या रिट, जिनके अन्तर्गत बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार–पृच्छा और उत्प्रेषण रिट हैं, या उनमें से कोई, निकालने की शक्ति होगी।
9	किसी को भी मनमाने तौर पर गिरफ्तार या नजरबंद या निर्वासित नहीं किया जाएगा।	22	(1) किसी व्यक्ति को, जो गिरफ्तार किया गया है, ऐसी गिरफ्तारी के कारणों से यथाशीघ्र अवगत कराए बिना अभिरक्षा में विरुद्ध नहीं रखा जाएगा। या अपनी रूचि के विधि व्यवसायी से परामर्श करने और प्रतिरक्षा कराने के अधिकार से वंचित नहीं रखा जाएगा। (2) प्रत्येक व्यक्ति को, जो गिरफ्तार किया गया है और अभिरक्षा में विरुद्ध रखा गया है, गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट के न्यायालय तक यात्रा के लिए आवश्यक समय को छोड़कर ऐसी गिरफ्तारी से चौबीस घंटे की अवधि में निकटतम मजिस्ट्रेट के प्राधिकार के बिना उक्त अवधि से अधिक अवधि के लिए अभिरक्षा में विरुद्ध नहीं रखा जाएगा।
10	प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण समानता के आधार पर यह हक है कि उसके खिलाफ कोई आरोप हो तो उसका निर्णय स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा न्यायोचित और सार्वजनिक सुनवाई के आधार पर किया जाए।	39 (क)	राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि विधिक तंत्र इस प्रकार काम करे कि समान अवसर के आधार पर न्याय सुलभ हो और वह विशिष्टता या यह सुनिश्चित करने के लिए कि आर्थिक या किसी अन्य निर्योग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए, उपयुक्त विधान या स्कीम द्वारा या किसी अन्य रीति से निशुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करेगा।

			304 (दंड प्रक्रिया संहिता) जहाँ किसी न्यायालय में चल रहे मुकदमें में आरोपी का प्रतिनिधित्व कोई वकील न कर रहा हो, और जहां न्यायालय को लगे कि आरोपी के पास इतने साधन नहीं है कि वह अपने लिए वकील रख सके, न्यायालय उसके बचाव के लिए राज्य के खर्चे पर वकील मुकर्रर करेगा। इसी तरह 303 एवं 327 अनुच्छेद भी इसी प्रकार के न्याय से सम्बंधित है।
11	प्रत्येक व्यक्ति को तब तक निर्दोष माने जाने का अधिकार है जब तक कि सार्वजनिक मुकदमें में वह दोषी नहीं साबित हो जाता।	20	सामान्य कानून का सिद्धान्त, कानून के शासन का सिद्धांत, अपराध सिद्ध न होने तक निर्दोष माना जाना सुप्रतिष्ठित हैं। 20 (1) कोई व्यक्ति किसी अपराध के लिए तब तक सिद्ध दोष नहीं ठहराया जाएगा, जब तक कि उसने ऐसा कोई कार्य करने के समय, जो अपराध के रूप में आरोपित है, किसी प्रवृत्त विधि का अतिक्रमण नहीं किया है या उससे अधिक शास्ति का भागी नहीं होगा जो उस अपराध के लिए जाने के समय प्रवृत्त विधि के अधीन अधिरोपित की जा सकती थी।
12	प्रत्येक व्यक्ति को उसके निजत्व परिवार, घर या पत्र व्यवहार में हस्तक्षेप या उसके सम्मान और प्रतिष्ठा पर प्रहार के खिलाफ कानून की सुरक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।		संसद द्वारा बनाए गए कानून के द्वारा इनमें से प्रत्येक को संरक्षण दिया गया है।
13	(1) प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक राज्य की सीमा के अंदर आने–जाने और बसने का अधिकार है। (2) प्रत्येक व्यक्ति को अपने	19	सभी नागरिकों को– घ. भारत के राज्य–क्षेत्र में सर्वत्र अबाध संचरण का। ङ भारत के राज्य–क्षेत्र के किसी भाग में निवास करने और बस जाने का अधिकार है।

	देश–सहित किसी भी देश से अन्य देश में जाने और फिर अपने देश में लौट आने का अधिकार है।		पासपोर्ट अधिनियम की व्यवस्थाएं।
14	प्रत्येक व्यक्ति को अत्याचार से बचने के लिए दूसरे देशों में शरण पाने की कोशिश करने और ऐसी शरण का उपभोग करने का अधिकार है।		यद्यपि संविधान में इस विषय में कोई स्पष्ट व्यवस्था नहीं की गई है तथापि भारत समय–समय पर लोगों को शरणार्थी का दर्जा देता रहा है और कभी–कभी तो उवने लाखों लोगों को अत्याचार से बचाने के लिए यह दर्जा प्रदान किया है।
15.	(1) प्रत्येक व्यक्ति को राष्ट्रीयता का अधिकार है। (2) किसी भी व्यक्ति को अपनी राष्ट्रीयता से मनमाने तौर पर वंचित नहीं किया जाएगा और न ही उसे अपनी राष्ट्रीयता बदलने के अधिकार से वंचित किया जाएगा।	9	इस संविधान के प्रारम्भ पर प्रत्येक व्यक्ति, जिसका भारत में अधिवास है और (क) जो भारत के राज्य–क्षेत्र में जन्मा था, या (ग) जो ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले कम से कम पाँच वर्ष तक भारत के राज्य क्षेत्र में मामूली तौर से निवासी रहा है, भारत का नागरिक होगा। यदि किसी व्यक्ति ने किसी विदेशी राज्य की नागरिकता स्वेच्छा से अर्जित कर ली है। तो वह अनुच्छेद 5 के आधार पर भारत का नागरिक नहीं होगा अथवा अनुच्छेद 6 या अनुच्छेद 8 के आधार पर भारत का नागरिक नहीं समझा जाएगा। प्रत्येक व्यक्ति, जो इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में से किसी के अधीन भारत का नागरिक है या समझा जाता है, ऐसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए जो संसद द्वारा बनाई जाए, भारत का नागरिक बना रहेगा।
16	विवाह और परिवार के सम्बंध में स्त्री/पुरुष के समान अधिकार।		अलग–अलग धर्मों के लोगों के लिए बनाई उपयुक्त विधियों में इनकी व्यवस्था की गई है।
17	(1)प्रत्येक व्यक्ति को सम्पत्ति का स्वमित्व रखने का अधिकार है। (2) किसी को भी मनमाने ढंग से उसकी संपत्ति से वंचित नहीं	300 क	किसी व्यक्ति को उसकी सम्पत्ति से विधि के प्राधिकार से ही वंचित किए जाएगा, अन्यथा नहीं।

	किया जाएगा।		
18	प्रत्येक व्यक्ति को विचार, अंतकरण और धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार है।	25 (1)	सभी व्यक्तियों को अंतःकरण की स्वतंत्रता का और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने का समान हक होगा।
19	प्रत्येक व्यक्ति को, कोई भी मत रखने और उसे अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता का अधिकार है।	19 क	सभी नागरिकों को (क) वाक्–स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति स्वतंत्रता का अधिकार होगा।
20	प्रत्येक व्यक्ति को शांतिपूर्ण सम्मेलन और किसी भी संघ में शामिल होने का अधिकार है।	19 (ख)	सभी नागरिकों को शांतिपूर्ण और निरायुद्ध सम्मेलन का अधिकार होगा। 19 (ग) सभी नागरिकों को संगम या संघ बनाने का अधिकार होगा।
21	(1) प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश के शासन में भाग लेने का अधिकार है।	325	संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान–मण्डल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए निर्वाचन के लिए प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के लिए एक साधारण निर्वाचक नामावली होगी और केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या इनमें से किसी के आधार पर कोई व्यक्ति ऐसी किसी नामावली में सम्मिलित किए जाने के लिए अपात्र नहीं होगा या ऐसे ही किसी निर्वाचन क्षेत्र के लिए किसी विशेष निर्वाचक नामावली में सम्मिलित किए जाने का दावा नहीं करेगा। 326 लोकसभा और प्रत्येक राज्य की विधान के लिए निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होंगे अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति, जो भारत का नागरिक है और ऐसी तारीख को जो समुचित विधान मण्डल द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस निमित नियत की जाए, कम से कम अठाहर वर्ष की आयु का है और इस संविधान या समुचित विधान मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन अनिवास, चिन्ताविकृति, अपराध या भष्ट या अवैध आचारण

			के आधार पर अन्यथा निरर्हित नहीं कर दिया जाता है, ऐसे किसी निर्वाचन में मतदाता के रूप में रजिस्ट्रीकृत होने का हकदार
21	(2) प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश की सरकारी सेवाओं में प्रवेश करने का समान अधिकार है।	16 (1)	राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से सम्बंधित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समता होगी। 16 (2) राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के संबंध में केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्म स्थान, निवास या इनमें में किसी के आधार पर न तो कोई नागरिक अपात्र होगा और न उससे विभेद किया जाएगा।
21	(3) सार्वजनिक और समान मताधिकार के आधार पर आयोजित प्रमाणिक चुनावों के माध्यम से व्यक्त की गई जनता की इच्छा सरकार की सत्ता का आधार होगी।		पूर्ववत् (पूर्वोद्धत)
22	प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है और वह उन आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों के चरितार्थ किए जाने का हकदार है जो उसकी गरिमा और उसके व्यक्तित्व के मुक्त विकास के लिए अनिवार्य है।	38 (1)	राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की, जिसमें सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्रमाणित करे, भरकस प्रभावी रूप में स्थापना और संरक्षण करके लोक कल्याण की अभिवृद्धि का प्रयास करेगा।
23	(1) प्रत्येक व्यक्ति को काम करने का अधिकार है। (2) प्रत्येक व्यक्ति को समान कार्य के लिए समान वेतन पाने का अधिकार है। (3) प्रत्येक व्यक्ति को न्याय	39 क	राज्य अपनी नीति का विशिष्टता इस प्रकार संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से पुरुष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो। 43 राज्य उपयुक्त विधान या आर्थिक संगठन द्वारा या किसी अन्य रीति से कृषि के, उद्योग के

	सम्मत और लाभदायक पारिश्रमिक पाने का अधिकार है, ताकि वह अपने लिए और अपने परिवार के लिए ऐसा जीवन स्तर सुनिश्चित कर सके। जो मानवीय गरिमा के अनुरूप हो।		अन्य प्रकार के सभी कर्मकारों के काम, निर्वाह, मजदूरी शिष्ट जीवन स्तर और अवकाश का सम्पूर्ण उपयोग सुनिश्चित करने वाली काम की दशाएं तथा सामाजिक और सांस्कृतिक अवसर प्राप्त करने का प्रयास करेगा और विशिष्टया ग्रामों में कुटीर उद्योगों को वैयक्तिक या सरकारी आधार पर बढ़ाने का प्रयास करेगा।
	(4) अपने हितों की रक्षा के लिए प्रत्येक व्यक्ति को श्रमिक संघ बनाने और संघ में शामिल होने का अधिकार है।	19 (1)	ग. पूर्वोद्धत
24	प्रत्येक व्यक्ति को विश्राम और अवकाश का अधिकार है जिसमें काम के घण्टों पर उचित सीमा लगाना और सवेतन अवकाश भी शामिल है।	43	पूर्वोद्धत
25	(1) प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे जीवन स्तर का अधिकार है जिसमें काम के घण्टों पर उचित सीमा लगाना और सवेतन अवकाश भी शामिल है।	47	राज्य अपने लोगों के पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊंचा करने और लोक स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्यों में मानेगा और राज्य विशिष्टतया मादक पेयों और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक औषाधियों के, औषधीय प्रयोजनों से भिन्न उप भोग का प्रतिषेध करने का प्रयास करेगा।
	(2) मातृत्व और बचपन विशेष ध्यान दिये जाने और विशेश सहायता के पात्र है।	39 (च)	राज्य अपनी नीति का, विशिष्टतया इस प्रकार संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधाएं दी जाएं और बालकों और अल्पवय व्यक्तियों की शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से रक्षा की जाए।
26	हर व्यक्ति को शिक्षा पाने का अधिकार है।	42	राज्य काम की न्यासंगत और मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने के लिए प्रसूति सहायता के

			लिए उपबंध करेगा। 45 इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष की अवधि के भीतर सभी बालकों को चौदह वर्ष की आयु पूरी करने तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने के लिए उपबंध करने का प्रयास करेगा।
27	प्रत्येक व्यक्ति को समुदाय के सांस्कृतिक जीवन में निर्बाध रूप से भाग लेने, कलाओं का आनन्द उठाने तथा वैज्ञानिक प्रगति और इसके लाभों में हिस्सेदारी करने का अधिकार है।	51 क	भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह (च) हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली का महत्व समझे उसका परिक्षण करें।
28	प्रत्येक व्यक्ति ऐसी सामाजिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था का हकदार है जिससे इस घोषणा में वर्णित अधिकारों और स्वतंत्रताओं को पूर्ण रूप से साकार किया जा सके।	38	पूर्वोद्धत 51 राज्य (क) अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की अभिवृद्धि का (ख) राष्ट्रों के बीच न्याय संगत और सम्मानपूर्ण संबंधों को बनाए रखने का (ग) संगठित लोगों के एक–दूसरे से व्यवहारों में विधि और संधि बाह्यताओं के प्रति आदर बढ़ाने का और (घ) अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के माध्यस्थय् द्वारा निपटारे के लिए प्रोत्साहन देने का प्रयास करेगा।
29	समुदाय के प्रति प्रत्येक व्यक्ति के कुछ कर्तव्य है और उन कर्तव्यों के पालन से ही उसके व्यक्तित्व का निर्बाध और पूर्ण विकास सम्भव है।	51 क	नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह (क) संविधान का पालन करें और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्र ध्वज और राष्ट्रगान का आदर करें। (ख) स्वतंत्राओं के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उक्त आदर्शों को हृदय में संजोय रखे और उनका पालन करें। (ग) भारत की प्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करें और उसे अक्षुण्णु रखें। (घ) देश की रक्षा करे आह्वान किए जाने पर

			राष्ट्र की सेवा करें। (ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे, जो धर्म, भाषा, प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हो। (च) हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझे और उसका परिरक्षण करें। (छ) प्राकृतिक पर्यावरणकी जिसके अन्तर्गत वन झील, नदी और वन्य जीव है रक्षा करेऔर उसका संवर्धन करे तथा प्राणि मात्र के प्रति दयाभाव रखे। (ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करें। (झ) सार्वजनिक सम्पति को सुरक्षति रखे और हिंसा से दूर रहे। (ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की आरे बढ़ने का सतत प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरन्तर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई उचाइयों को छूले।

vH;kl ç'u

1. मानवाधिकार किसे कहते है ?
2. मानवाधिकार का क्या महत्व है ?
3. अनुच्छेद 14 किससे सम्बंधित है ?
4. अनुच्छेद 15 किससे सम्बंधित है ?
5. अनुच्छेद 42 किससे सम्बंधित है ?

6. अनुच्छेद 51क किससे सम्बंधित है ?

भारत में धार्मिक सहिष्णुता एवं राष्ट्रीय एकता

e[; f'k{k.k fcUn

- भौगोलिक अनेकता में एकता
- धार्मिक सहिष्णुता
- धार्मिक अनेकता में एकता
- सामाजिक सांस्कृतिक एकता अनेकता में एकता

भारत विभिन्नताओं का देश है। भौगोलिक बनावट, जलवायु, जनसंख्या, प्रजाति, धर्म, इतिहास, राजनीति, भाषा, संस्कृति एवं समाज व्यवस्था की दृष्टि से भारत के विभिन्न भागों में अनेक विषमताएं पाई जाती हैं। इन विभिन्नताओं के बावजूद भी विभिन्न लोगों, जातियों एवं समुदायों के बीच एक अनोखी समानता एवं एकता भारत में सदैव विद्यमान रही है। भारत के उत्तर में हिमालय, दक्षिण में पठार एवं समुद्र तट, पश्चिम में थार का रेगिस्तान, पूर्व में पहाड़ी भाग एवं मध्य में मैदानी भाग ने यहाँ को प्रभावित किया है। पहाड़ी, मैदानी, पठारी एवं समुद्रतटीय क्षेत्रों के निवासियों के खान—पान पहनावे, भाषा, रहन सहन, प्रथाओं, त्योहारों एवं उत्सवों में विभिन्नताएं पाई जाती है। फिर सम्पूर्ण भारत एक संगठित इकाई एवं राष्ट्र है। भारतीय संविधान में इस एकता को बनाए रखने का आश्वासन दिया गया है और सभी धर्मों, भाषाओं, प्रान्तों, जातियों एवं प्रजातियों के लोगों के हितों की रक्षा करने एवं देश के पिछड़े, दुर्बल एवं निर्धन लोगों के उत्थान के लिए कल्याणकारी योजनाएं बनाने की बात कही गई है।

भारत के निवासियों, उनकी समाज व्यवस्था, सभ्यता और संस्कृति की विभिन्नता एवं एकता को जानने से पूर्व उनकी भौगोलिक पृष्ठभूमि को जानना, आवश्यक है क्योंकि भौगोलिक परिस्थितियां मानव के धर्म, दर्शन, कला, सम्भ्यता, संस्कृति, संस्थाओं आदि सभी पक्षों को प्रभावित करती है।

भारतीय समाज एवं संस्कृति की एक अनूठी विशेषता है— विविधता में एकता। इस विशेषता ने ही इसे अनन्त काल से अब तक जीवित रखा है। भारत में प्रजाति, धर्म, संस्कृति एवं भाषा की दृष्टि से अनेक विभिन्नताएं पाई जाती हैं। इन विभिन्नताओं के होते हुए भी सम्पूर्ण राष्ट्र में एकता के दर्शन होते हैं। इस सन्दर्भ में सर हर्बर्ट रिजले ने उचित ही लिखा है, ''भारत में धर्म, रीति—रिवाज और भाषा तथा सामाजिक और भौतिक विभिन्नताओं के होते हुए भी जीवन की एक विशेष एकरूपता कन्या कुमारी से लेकर हिमालय तक देखी जा सकती है। वास्तव में, भारत का एक अलग चरित्र एवं व्यक्तित्व हैं, '' जो भी कारण हो, विचारों तथा जातियों के अनेक तत्वों में समन्वय, अनेकता में एकता उत्पन्न करने की भारतीयों की योग्यता एवं तत्परता ही मानव जाति के लिए भारत की विशिष्ट देन रही है।''

पण्डित नेहरू ने एक बार कहा था, ''भारत का सिंहावलोकन करने वाले भारत की अनेकता और विभिन्नता से बहुत अधिक प्रभावित हो जाते हैं। वे भारत की एकता को साधारणतः नहीं देख पाते, यद्यपि युगों—युगों से भारत की मौलिक एकता ही उसका महान् एवं मौलिक तत्व रहा है। पांच या छः हजार वर्ष हुए कि सिन्धु घाटी की सभ्यता उत्तर में फली—फूली और दक्षिण भारत तक फैल गई। इतिहास के उस प्रभाव से अनेक जातियां, विजेता, तीर्थयात्री एवं छात्र एशिया की ऊँची—ऊँची भूमि से

भारत के मैदान में सैर के लिए आए जिन्होंने भारतीय जीवन संस्कृति कला को प्रभावित किया किन्तु वे इसी देश में विलीन हो गए। इन सर्म्पकों से भारत में परिवर्तन हुआ किन्तु उसकी आत्मा मौलिक रूप से पुरानी रही है। यह तभी सम्भव हुआ होगा। जब मौलिक एकता की भावना की जड़े गहराई तक हों, जब उन्हें नवागन्तुकों ने स्वीकार किया हो।'' इस कथन से स्पष्ट है कि भारत में विभिन्नता में एकता प्राचीनकाल से विद्यमान रही है और यहाँ तक कि बाहर से आने वाले लोग भी इस एकता से प्रभावित हुए और अपनी विभिन्नता को भी यहां की एकता में घुला–मिला दिया। भारत की विभिन्नता को भी यहां की एकता में घुला–मिला दिया। भारत की विभिन्नता में एकता के दर्शन जिन क्षेत्रों में किए जाते हैं, वे इस प्रकार से है–

HkkSxksfyd vusdrk esa ,drk

भौगोलिक दृष्टि से भारत में अनेक विषमताएं व्याप्त है। विभिन्न विषमताओं के बावजूद भी सम्पूर्ण देश भौगोलिक दृष्टि से एक इकाई का निर्माण करता है। देश की प्राकृतिक सीमाओं ने इस अन्य देशों से पृथक किया है और यहाँ के देशवासियों में एक क्षेत्र में निवास करने की भावना जाग्रत की है। उत्तर में बद्रीनाथ, दाक्षिण में रामेश्वरम, पूर्व में पुरी और पश्चिम में द्वारका भारत के धार्मिक तीर्थ स्थल हैं जो सभी देशवासियों को एकता के सूत्र में पिरोते हैं तथा देशवासियों में जन्मभूमि के प्रति अगाध प्रेम पैदा करते है।

/kkfeZd vusdrk esa ,drk

भारत विभिन्न धर्मों की जन्मभूमि है। हिन्दू, जैन, बौद्ध एवं सिक्ख धर्मों का उदय भारत मे हुआ तथा इस्लाम और ईसाई धर्म विदेशों से यहां आए। प्रत्येक धर्म में कई मत–मतान्तर एवं सम्प्रदाय पाए जाते हैं और उनके नियमों एवं मान्यताओं में अनेक विविधताएं हैं। विभिन्न धर्मों के लोक सदियों से भारत में एक साथ रहते रहे है और धर्म न भारत में एकता पैदा की है। इस सन्दर्भ में प्रो0 एम0एन0 श्रीनिवास लिखते है, ''एकता की अवधारणा हिन्दू धर्म में अन्तर्निहित है। भारत के कोने–कोने में हिन्दुओं के पवित्र तीर्थ स्थान हैं। पूरे देश के हर भाग में शास्त्रीय संस्कृति के कुछ विशिष्ट पहलू दृष्टिगोचर होते हैं। भारत ने केवल हिन्दुओं के लिए ही पवित्र भूमि है, यह सिख, जैन और बौद्ध धर्म के अनुयामियों के लिए भी पवित्र स्थल है। मुसलमानों और ईसाइयों के भी भारत में अनेक तीर्थ स्थान हैं। विभिन्न धार्मिक समूहों में जाति–प्रथा पाई जाती है और इससे इन सब में एक समान सामाजिक एकीकरण की प्रक्रिया को बल मिला है।

lkekftd lkaLd`frd ,drk vusdrk esa ,drk

भारत में विभिन्न क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों के परिवारों में विवाह, रीति–रिवाजों, पहनावा आदि में विभिन्नता पाई जाती है। उसके बावजूद भी प्राचीनकाल से ही भारत की सामाजिक संरचना एवं

संस्कृति में एकता के दर्शन होते है। अनेक सदियों पुरानी प्रथाएं, रीति–रिवाज रूढ़ियां एवं परम्पराएं आज भी यहां प्रचलित हैं।

सांस्कृतिक सहिष्णुता के कारण यहां अनेक बाह्य संस्कृतियों के सम्पर्क के बावजूद भी भारतीय संस्कृति का स्वरूप अक्षुण्ण बना रहा। वर्तमान समय में भी विभिन्न, धर्म, जाति, क्षेत्र एवं भाषा समूहों के बावजूद भी यहाँ एकता के भाव विद्यमान हैं। शिक्षितों एवं अशिक्षितों, ग्रामीण एवं शहरी लोगों तथा प्रशासक एवं जनता में सामाजिक दृष्टि से निर्माणात्मक सम्बंध आज भी कायम है। प्रजातंत्र ने देश में भाई–चारे और समानता की भावना के विकास में योग दिया है।

/kkfe!d lfg".kqrk

भारतीय संस्कृति की महान् विशेषता इसकी सहिष्णुता है। भारत में सभी धर्मों, जातियों, प्रजातियों एवं सम्प्रदायों के प्रति उदारता, सहिष्णुता एवं प्रेम–भाव पाया जाता है। किसी के प्रति कठोरता या द्वेष–भाव नहीं। यहाँ पर समय–समय पर अनेक विदेशी संस्कृतियों का आगमन हुआ और सभी को फलने–फूलने का अवसर उपलब्ध रहा है, किसी संस्कृति का दमन नहीं किया गया और न ही किसी समूह पर संस्कृति थोपी गई है। अल्पसंख्य और बहुसंख्यक दोनों ही संस्कृतियां समान रूप से विद्यमान हैं। हिन्दू, मुसलमान, सिख, बौद्ध, जैन और ईसाई सभी अपनी–अपनी विशेषताएं बनाए हुए हैं। असहिष्णु होकर कभी भी विदेशियो एवं अन्य संस्कृतियों के लोगों पर बर्बर अव्याचार नहीं किए गए।

भारतीय संस्कृति की उदार एवं सहिष्णु प्रकृति के कारण ही इसमें विभिन्न संस्कृतियों का समन्वय हो पाया है। भारतीय संस्कृति वह समुद्र है जिसमें विभिन्न संस्कृति रूपी सरिताएं अपना पृथक अस्तित्व समाप्त कर विलीन हो गई हैं। भारतीय संस्कृति में जन जातीय, हिन्दू, मुस्लिम, शक, हूण, सिथियन, ईसाई आदि सभी संस्कृतियों के प्रभाव से भारतीय संस्कृति नहीं हुई वरन् उसमें समन्वय एवं एकता ही स्थापित की है। मुसलमानों के सम्पर्क से अल्लोपनिषद बनी तथा 'दीन–ए–इलाही'धर्म पनपा। मुसलमानों का सूफी सम्प्रदाय भारत के अध्यायवाद, योगसाधना और रहस्यवाद का मुस्लिम संस्करण है। राम रहीम, कृष्ण और करीम की एकता स्थापित कर महापुरुषों द्वारा हिन्दू और इस्लाम धर्म में समन्वय करने का प्रत्यन किया गया है। इसी प्रकार से बौद्ध धर्म, हिन्दू धर्म का ही अंग बन गया। बुद्ध को राम और कृष्ण की भांति ही अवतार माना जाता है? बोधि–वृक्ष हिन्दुओं का भी पवित्र वृक्ष है और बौद्ध–चैत्य हिन्दू मन्दिरों में परिवर्तित हो गए। यवन, शक, हूण और कुषाण आदि लोगों को भी भारतीय समाज का अंग बना लिया गया। स्पष्ट है कि भारतीय समाज एवं संस्कृति में समन्वय की महान् शक्ति है। इसलिए ही वह निरन्त गतिमान रही और आज तक गतिमान है जिससे भारतीय संस्कृतियों की परम्पराओं को अब तक अक्षुण्ण रखा है।

भारत के सन्दर्भ में राष्ट्रीय एकता का अर्थ है भारत के विभिन्न प्रदेशों, जातियों, वर्गों, भाषाओं, धर्मों आदि की बहुरंगी विविधता के बीच एकता की व्यापक धारणा जो कुछ और सीमित स्वार्थों की उपेक्षा कर देश विभिनन प्रश्नों पर अखिल भारतीय दृष्टिकोण से विचार और व्यवहार करने की प्रेरणा दे।

राष्ट्रीय एकता की यह भावना धर्म, जाति, क्षेत्र और भाषा के विचार तथा उसके महत्व का निषेध नहीं करती लेकिन इस बात पर बल देती है कि धर्म, जाति, क्षेत्र और भाषा की तुलना में भारत राष्ट्र के प्रति अपनी आस्था और भारत राज्य की नागरिकता के प्रति अपने कर्तव्य पालन को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए। हमारी पहली आस्था और हमारी अन्तिम आस्था भारत के प्रति ही होनी चाहिए। भारत जैसे देश में एकता बनाए रखने और राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने का मार्ग यही हो सकता है कि राज्य सभी धर्मों को समान सम्मान दे तथा धार्मिक आधार पर अपने नागरिकों में कोई भेदभाव न करें। विविधताओं को आघात पहुँचाना एकता का मार्ग नहीं है। राष्ट्रीय एकता का मार्ग है, इन विविधताओं को बनाए रखते हुए एकता की प्राप्ति।

सर्वधर्म समभाव से ही राष्ट्रीय एकता का मार्ग प्रशस्त हो सकता है। राष्ट्रीय एकता बहुत अधिक अंशों में एक भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक स्थिति है, राष्ट्र के लोगों की राष्ट्र की साथ एकाकार होने की स्थिति है और राष्ट्रीय एकता की स्थिति को तभी प्रापत किया जा सकता है जबकि भारत के सभी नागरिकों का भारतीय राजव्यवस्था में समान रूप से प्रवेश हो, सभी नागरिकों की राजव्यवस्था में भागीदारी बने, सभी नागरिक स्वंय को सम्मानित अनुभव करें, भारत राष्ट्र और भारत राज्य के प्रति उनकी आस्था एवं भक्ति कमजोर होने के बजाय दिन–प्रतिदिन बढ़े। इस प्रकार की समस्त स्थिति को सर्वधर्म समभाव के आधार पर ही प्राप्त किया जा सकता है।

सर्वधर्म समभाव सार्वजनिक जीवन में अलग–अलग धर्मों के अनुयायियों में धार्मिक विभेद के भाव को कमजोर करता और उनमें एक ही राज्य के नागरिक, एक ही राष्ट्र के निवासी होने के भाव को सुदृढ़ करता है। राष्ट्रीय एकता का मार्ग यही है। इस प्रकार सर्वधर्म समभाव राष्ट्रीय एकता का एकमात्र मार्ग है, राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से तथा अन्य सभी बातों की दृष्टि से भारत के लिस सर्वधर्म समभाव का कोई विकल्प नहीं है।

भारत में राष्ट्रीय एकता सदैव से एक आवश्यकता एवं चुनौती रही है। भारत में जातिगत, धार्मिक, भाषागत तथा क्षेत्रीय सांस्कृतिक विविधताओं के कारण राष्ट्रीय एकता आदर्श और भी आवश्यक हो जाता है। हमारे राष्ट्रीय पर्व स्वतन्त्रता दिवस (15 अगस्त), गणतंत्र दिवस (26 जनवरी) तथा गांधी जयन्ती (2 अक्टूबर) जब हम प्रतिवर्ष मनाते है। तो (एक राष्ट्र) का भाव हमारे भीतर राष्ट्र के प्रति समर्पण तथा देशभाक्ति का असीम भाव जाग्रत कर देता है। 15 अगस्त 1947 के दिन हमारा देश आजाद हुआ जब हम प्रतिवर्ष स्वतन्त्रता दिवस मनाते है तो उन सभी शहीरों एवं महापुरुषों को याद करते हैं। जिन्होंने अपने देश के लिए असीम बलिदान दिया। हम गणतंत्र दिवस इसलिए मनातेहैं कि हम राष्ट्र निर्माण तथा राष्ट्रीय विकास के पथ पर निरन्तर चलते रहें और भारत का समाज स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व के आदर्श को प्राप्त कर सकें।

राष्ट्रीय एकता को बाधक करने वाले निम्नलिखित तत्व है–

- भारत में प्रचलित अत्याधिक आर्थिक विषमता राष्ट्रीय एकता की स्थापना में बाधक रही है।
- जातिवाद इस क्षेत्र में प्रमुख बाधा है।जातियों ने धार्मिक विभाजन को और अधिक बांटने का कार्य किया है।
- साम्प्रदायिकता से हमारे देश में दगों एवं कटटरतावाद को बढ़ावा दिया है और राष्ट्रीय एकता की क्षति हुई है।

- क्षेत्रीयतावाद अथवा प्रान्तीयतावाद के भाव ने लोगों में अपने राष्ट्र की बजाए अपने क्षेत्र के प्रति लगाव इस रूप में उत्पन्न किया है कि वे अन्य क्षेत्रों तथा अपने राष्ट्र के प्रति समर्पण भाव से दूर हुए है।
- राजनीतिक अवसरवाद की प्रवृत्ति ने भी राष्ट्रीय एकता में बाधा उपस्थित की है।
- हिंसात्मक गतिविधियों तथा अलगावाद ने राष्ट्रीय एकता को बाधित किया है।
- भष्टाचार से देश में नीतियों सफल नहीं हो पाती है और जनता में गरीबी एवं बेरोजगारी से समस्याओं एवं संघर्ष की स्थिति जन्म लेती है, जो राष्ट्रीय एकता के लिए घातक है।

jk"Vh; ,drk dh ck/kkvk dk nj dju mik;

भारत में राष्ट्रीय एकता के मार्ग की बाधाओं के निराकरण हेतु निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए–

- समाज के सभी वर्गों के विकास हेतु प्रयास किए जाने चाहिए।
- शिक्षा जगत में क्रान्ति से लोगों में जागरूकता, ज्ञान एवं राष्ट्रीय एकता के मूल्यों का संचार किया जा सकता है।
- राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता हेतु प्रबल लोकमत का निर्माण किया जाना चाहिए।
- विभिन्न प्रदेशों एवं भाषायी राज्यों के बीच अधिकाधिक सांस्कृतिक आदान–प्रदान के प्रयास किए जाने चाहिए।
- शासन को अपनी कठोर नीतियों द्वारा हिंसात्मक अलगावादी तथा आतंककारी गतिविधियों पर नियंत्रण लगाना चाहिए।
- शासकीय नीतियों द्वारा लोगों में आर्थिक विषमता उन्मूलन के सकारात्मक प्रयास किए जाने चाहिए।

हमारी संस्कृति समस्त मानवीय गुणों की एक लहलहाती फसल है तथा सद्‌भाव, सहिष्णुता, त्याग, बलिदान, आत्मीयता सर्वधर्मसमभाव एवं विश्वबन्धुत्व के उदान्त गुणों ने इसे सदा–सर्वदा खींचने का कार्य किया है। संकीर्ण विचारधाराओं से ऊपर उठकर सम्पूर्ण विश्व के कल्याण के लिए चिन्तन करना हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है। इसलिए कहा गया है

'' सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग भवेत्।।''

इस प्रकार हम कह सकते है कि विश्वबन्धुत्व की भावना ने अनवरत रूप से हमारी संस्कृति को समृद्धशाली बनाने की दिशा में कार्य किया है। हमें सदैव एक जागरूक नागरिक की भांति इस भावना की अभिवृद्धि में सहयोग प्रदान करना चाहिए एवं जातीयता, साम्प्रदायिकता, क्षेत्रीयता, उग्र राष्ट्रीयता एवं अन्य अनेकानेक संकीर्ण भावनाओं से ऊपर उठते हुए निरन्तर विश्वबन्धुत्व की दिशा में कार्य करने हेतु सतत प्रयत्नशील रहना चाहिए।

vH;kl ç'u

1. राष्ट्रीय एकता से क्या तात्पर्य है ?

2. भौगोलिक अनेकता में एकता का क्या अर्थ है ?

3. धार्मिक अनेकता में एकता का क्या अर्थ है ?

4. धार्मिक साहिष्णुता से आप क्या समझते है ?

5. राष्ट्रीय एकता को बाधक तत्व कौन–कौन से है ?

6. भारतीय संस्कृति की विशेषता लिखिए।

वैश्वीकरण एवं शांति

समष्टि से प्रेम किये बिना हम व्यक्ति से कैसे प्रेम कर सकते है? ईश्वर ही वह समष्टि है, सारे विश्व का यदि एक अखण्ड रूप से चिन्तन किया जाय, तो वही ईश्वर है, और उसे पृथक–पृथक रूप से देखने पर वही यह दृश्यमान संसार है– व्यष्टि है। समष्टि वह इकाई है, जिसमें लाखों छोटी–छोटी इकाइयों का योग है। इस समष्टि के माध्यम से ही सारे विश्व को प्रेम करना सम्भव है– *Lokeh foodkuUn*

e[; f'k{k.k fcUn

- वैश्वीकरण और शंति
- संयुक्त राष्ट्रसघ की स्थापना
- अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा

आज के समय में स्वामी विवेकानन्द द्वारा कहे गये ये वाक्य आज के समय के लिए अत्यधिक प्रासंगिक है। आज चारों तरफ हिंसा, अलगाववाद, आतंकवाद जैसी बात सुनाई व दिखाई पड़ती है किन्ही किसी देश में विभाजन तो किही राज्य में विभाजन जैसी समस्यायें आम सी बात हो गई है दो देशों के बीच तनाव, आक्रमण वहाँ के रहने वाले लोगों को किस कदर प्रभावित करता है आप टेलीविजिन समाचार पत्रों में देख वह सुन सकते है लाखों बेगुनाह हर साल इस प्रकार की घटनाओं के शिकार होते है सबसे अधिक पीढ़ा तब होती है जब इसके शिकार मासूम बच्चे होते हैं। अभी कुछ दिन पूर्व सीरियाई बच्चे की मौत ने पूरे विश्व को झकझोर कर रख दिया। इसी तरह की घटनायें आये दिन सुनाई पड़ती है।

o'ohdj.k vkj 'kfr

शांति, प्रगति के लिए अव्यंत आवश्यक है। यह बात वैश्विक प्रगति पर लागू होती है। विश्वशांति से ही वैश्विक प्रगति का मार्ग प्रशस्त हो सकता है, वैश्विक समुदाय द्वारा इस बात को अरसे से महसूस किया जाता रहा है। एक सुदर विकासोन्मुखी एवं वास्तव में सुसभ्य व मानवीय गुणों से परिपूर्ण समाज के निर्माण की पहली शर्त विश्वशांति है? शांति से सृजन होता है और अशांति से विध्वंस। विध्वंश से मानवता कराहती है, जबकि सृजन से इसका रूप निखरता है। यही कारण है कि विश्वशांति को एक बेहतर दुनिया बनाने के आदर्श के रूप में देखा जाता है। हमारी यह परिकल्पना हमने अकारण नहीं की जाती है। पूरी दुनिया ने दो–दो बार विश्वयुद्ध की त्रासदी तथा इससे उत्पन्न भयावह परिणामों को झेला है। युद्ध के दौरान की गई हिंसात्मक कार्यवाहियों के देश को आने वाली कई पीढ़ियों ने भुगता एवं महसूस किया है।

मौजूदा दौर में संसार भर में शस्त्रस्त्रों की होड़, आक्रमण, देशों पर बलपूर्वक अधिकार, परमाणु बम के हमले की आशंका, ताकतवर देशों द्वारा कमजोर देशों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप की बढ़ती प्रवृत्ति तथा क्षेत्रीय विवादों ने विश्वशांति की संकल्पना को खंडित किया है। इससे असंतुलन की स्थिति भी पैदा हुई है।

यद्यिप विश्वशान्ति की आवश्यकता को वैश्विक समुदाय द्वारा बहुत पहले महसूस किया गया था। यही कारण है कि प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद वर्ष 1920 में राष्ट्र संघ की स्थापना विश्वशांति के पवित्र उद्देश्य से की गई थी।

राष्ट्र संघ की स्थापना ने मानवता के हृदय में स्थायी शांति तथा युद्धों एवं सशस्त्र संघर्षों से मुक्त संसार की आशा को जन्म दिया। लोगों को विश्वास था कि भविष्य की पीढ़ियां शांति के वातावरण में जन्म लेगी, लेकिन जल्दी ही आपसी घृणा तथा द्वेष के कारण समूचा विश्व द्वितीय विश्वयुद्ध की आग में समा गया। विश्व शांति परिकल्पना अधूरी रह गई और सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था के रूप में राष्ट्र संघ का पतन हो गया।

द्वितीय विश्वयुद्ध के समय धुरी राष्ट्रों के विरुद्ध संघर्षह करते हुए राष्ट्रों ने राष्ट्र संघ को पुनजीवित करने की बजाए एक नए अंतर्राष्ट्रीय संगठन की स्थापना का निर्णय लिया, जिसकी रूपरेखा अटलांटिक चार्टर के आधार पर तैयार की गई। 24 अक्टूबर 1945 को अस्ति में आए संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को बढ़ावा देना, अंतर्राष्ट्रीय कानून एवं संधियों का सम्मान करना तथा आने वाली पीढ़ियों को युद्ध की त्रासदी से बचाना था। इन जिम्मेदारियों के निवर्हन का दायित्व महासभा, सुरक्षा परिषद, अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय तथा सचिवालय के रूप में संयुक्त राष्ट्र के छह घटकों को सौपा गया। इन घटकों में अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा बनाए रखने के लिए सुरक्षा परिषद को ही प्रमुख रूप से उत्तरदायी बनाया गया।

सुरक्षा परिषद संयुकत राष्ट्र की निरंतर कार्यरत संस्था है, जिसका प्राथमिक उत्तरदायित्व अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को बनाए रखना है। सुरक्षा परिषद अंतर्राष्ट्रीय विवादों के शांतिपूर्ण समाधान का प्रयास करती है। यह युद्ध अथवा शांति के भंग होने की स्थिति में आक्रामक देश की पहचान करके, सामूहिक सुरक्षा के अन्तर्गत उसके विरुद्ध प्रतिबंध लगाने या सामूहिक कार्यवाही करने का निर्णय लेती है। सुरक्षा परिषद किसी भी युद्ध को बंद करवाने के लिए आवश्यक निर्णय ले सकती है तथा साथ ही वह निशास्त्रीकरण तथा अस्त्र नियंत्रण व्यवस्था के लिए भी उत्तरदायी है। सुरक्षा परिषद के सिफारिश पर ही संयुक्त राष्ट्र संघ में किसी देश को प्रवेश मिलता है तथा इसी की सिफारिश पर ही महासभा, महासचिव की नियुक्ति करती है। महासभा तथा सुरक्षा परिषद अलग–अलग मतदान प्रक्रिया के द्वारा अंतर्राष्ट्रीय न्यायालयों के न्यायाधीशों का भी चुनाव करती है।

वर्तमान में प्रायः विश्व के सभी देश सुरक्षा परिषद के विस्तार को वैश्विक शांति एवं संतुलन के लिए आवश्यक मान रहे है। 193 देशों में से 120 देश चाहते हैं कि सुरक्षा परिषद में विस्तार ही बावजूद इसके एक स्पष्ट जनमत नहीं बन पा रहा है। जहां जी4 देश आपसी समर्थन देने की बात करते हैं वही 'काफी क्लब' के देश जैसे– पाकिस्तान, इटली, अर्जेंटीना, मेक्सिको, स्पेन, दक्षिण कोरिया सदस्यता को लेकर विरोध करते हैं। स्थायी सदस्य देशों के अपने व्यक्तिगत हित वर्तमान व्यवस्था को बनाए रखने में ही हैं इसलिए वे इसमें रूचि नहीं दिखाते हैं। अमेरिका, चीन तथा रूस समय–समय पर सदस्य राष्ट्रों

की स्थायी सदस्यता की बात करते हैं, लेकिन इनमें आपसी मतभेद ज्यादा है। इन मतभेदों के कारण संयुक्त राष्ट्र की भूमिका भी कमजोर हो रही है।

वैश्विक शांति, संतुलन, विकास एवं प्रगति से जुड़ा हुआ है। ऐसे में यह समय की मांग है कि सुरक्षा परिषद के विस्तार में राष्ट्रों की आपसी राजनीति आड़े न आए। वैश्विक जनमत को नकारा नहीं जा सकता। सुरक्षा परिषद में विस्तार के जरिए हम एक खुशहाल, न्यायापूर्ण एवं मानवीय मूल्यों से परिपूर्ण विश्व की तरफ बढ़ सकते हैं। इसके लिए विश्व समुदाय एवं संयुक्त राष्ट्र को उस भारतीय दर्शन को आत्मसात करना होगा, जिसका मूल है–

loZ HkoUrq lqf[ku% loZ lUrq fujke;k%A
loZ Hkknzkf.k i';Urq] ek df'pn~ nq[k Hkkxor~AA

अर्थात सभी सुखी हों, सभी निरोग हों। सब का कल्याण हो, कोई दुख का भागी न हो।

vH;kl ç'u

1. विश्व शांति की आवश्यकता एवं महत्व लिखिए।
2. संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना कब हुई ? इसकी स्थापना के उद्देश्य लिखिए।
3. अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के शांतिपूर्ण समाधान हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ के सुरक्षा परिषद के कार्य लिखिए।

सतत विकास

vFk ,o vko';drk i;koj.k ,o lrr fodkl

vFk& 'सतत विकास' अर्थात् Sustainable Development अंग्रेजी के दो शब्दों "Sustain" + "Development" से मिलकर बना है। sustain का अर्थ है संभालना (Support) या पोषित करना (nourish) और (Development) का अर्थ है विकास या जीवन की गुणवत्ता में सुधार। सतत विकास की संकल्पना विश्व पर्यावरण एवं विकास आयोग (ब्रंटलैण्ड आयोग 1987) द्वारा विकसित की गई, जिसमें सतत विकास को इस प्रकार से परिभाषित किया गया– ''यह एक गतिशीत (Dynamic) प्रक्रिया है जिसमें वर्तमान पीढ़ी की आवश्यताओं को भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं से समझौता किए बिना पूरा किया जाता है। सतत या संपोषणीय विकास मुख्यतः तीन तथ्यों पर आधारित है–

e|[; f'k{k.k fcUn|

- अर्थ एवं आवश्यकता पर्यावरण एवं सतत विकास
- संपोषणीय विकास की अवधारणा के मूलतत्व
- पर्यावरणीय आयाम
- संसाधनों का अवक्रमण
- भारत में पर्यावरण संरक्षण के उपाय

1. विकास हमेशा दीर्घ उद्‌देश्यों या दीर्घ अवधि के लिए होना चाहिए।

2. पर्यावरण और विकास एक दूसरे से सम्बद्ध ओर सामंजस्यपूर्ण होने चाहिए।

3. विकास को समानता के नियम का पालन करना चाहिए या एक पीढ़ी में समानता (अवसर की समानता, लोगों का सशक्तीकरण करके उन्हें विकास में सहभागी बनाना, गरीबी व आर्थिक वृद्धि के असमान वितरण को रोक कर समानता लाना) तथा अगली पीढ़ी में समानता (एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के बीच समानता– संसाधनों के अत्यधिक दोहन व प्रदूषण को रोक कर संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करके) लाने के उद्‌देश्य के साथ होना चाहिए।

vko';drk

वर्तमान समय में मनुष्य ने अत्याधिक तकनीकि प्रगति की है और सुख–सुविधाओं के विविध साधनों के उपभोग में वृद्धि हुयी है, परन्तु जहाँ एक ओर जीवन स्तर के उन्नयन हेतु विविध उपभोग की वस्तुओं की प्रचुरता हुई है वहीं दूसरी ओर बढ़ती हुई जनसंख्या के मरणपोषण हेतु खाद्यान्न उत्पादन, शुद्ध पेय जल आपूर्ति व शुद्ध वायु के अभाव की समस्याएं भी उत्पन्न हुई है। वैश्विक स्तर पर भी औसत तापमाप में वृद्धि के कारण द्वीपीय एवं समुद्रतटीय क्षेत्रों के जलमग्न होने का खतरा, प्राकृतिक आपदा एवं विभिनन बीमारियों का प्रकोप भी बढ़ गया है।

अतः ऐसी दशा में निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए उसकी मूलभूत आवश्यकता रोटी, कपड़ा और मकान तथा आधारभूत ढाँचा व शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा

तथा आत्मसम्मान सभी को उपलब्ध कराना आवश्यक है परन्तु विकास और प्रगति के नाम पर संसाधनों का अन्धाधुन्ध दोहन पर्यावरण को क्षति पहुँचा रहा है जिससे भूमण्डलीय तापन, ओजोन परत क्षरण, पर्यावरण प्रदूषण जलवायु परिवर्तन आदि समस्याएं उत्पन्न हो गई है जबकि विकास करते समय पर्यावरण और पारिस्थिति की संतुलन को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

विकासशील देशों में जनसंख्या वृद्धि की उच्च दर और ऐसी प्रौद्योगिकियों का प्रयोग जिनमें ऊर्जा और संसाधनों का दुरूपयोग होता है अब स्वीकार्य नहीं होगा, क्यों कि ये परिस्थितियों आधारणीय हैं। जिस रूप में आर्थिक विकास हो रहा है उससे केवल ''उपभोक्तावाद'' को ही बढ़ावा मिलेगा। प्रतिदिन बहुत अधिक संख्या में वस्तुएं विनिर्मित की जाती है और साथ ही अधिकाधिक पैकेजिंग सामग्रियों के उपयोग से भी बचें, क्यों कि ऐसा करके हम बहुत अधिक मात्रा में फोम और प्लास्टिक कचरा उत्पन्न करने से और साथ ही उनके निबटान की समस्या से भी बच सकते है।

पर्यावरण के महत्व को ध्यान में रखने का यह अर्थ नहीं है कि हमें खनिज पदार्थों या वनोत्यादों का प्रयोग बंद कर देना चाहिए ताकि वे भावी पीढ़ियों के लिए संरक्षति रहें। इसका एकमात्र अर्थ यही है कि हमें संसाधनों का धारणीय उपयोग करना चाहिए। उदाहरण के लिए धातुओं का बार–बार खदानों से निष्कर्षित करने के बजाय उपलब्ध धातुओं को पुनर्चक्रण द्वारा दुबारा प्रयोग में लाना चाहिए तथा आदि किसी स्थान से पेड़ों की कटाई की जाती है तो आस–पास के स्थानों में कम से कम उतनी ही संख्या में या उससे अधिक संख्या में पेड़ लगा दिए जाने चाहिए।

प्रायः आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण को परस्पर विरोधी स्वरूप का समझा जाता है। धारणीय विकास का लक्ष्य इन दोनों को मानव के लाभार्थ एक–दूसरे का पूरक बनाना है।

l:ik"k.kh; fodkl dh vo/kkj.kk d: eyrRo

- मानव की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति होना।
- व्यक्ति की वर्तमान व भविष्य की आवश्यकताओं में सामंजस्य।
- आर्थिक दक्षता तथा विकास (आर्थिक विकास के साथ–साथ प्राकृतिक पूंजी का संरक्षण)
- पर्यावरण प्रदूषण कम करना।
- पर्यावरण व विकास के मध्य अन्तर्निभरता।
- पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी तन्त्र का परिरक्षण।
- अन्तर तथा अन्तः पीढ़ी समानता।
- विकास के जनसाधरण की सहभागिता।
- जनसंख्या की स्थिरता जनसंख्या नियंत्रण।
- मूल्यों तथा आचारों में सकारात्मक परिवर्तन।

सतत विकास एक व्यापक अवधारणा है जो विकास के विभिन्न आयामों को समेटे हुए है। इसके मुख्यतः तीन आयाम है–

1. सामाजिक 2. आर्थिक 3. पर्यावरणीय

i;koj.kh; vk;ke

इसके अन्तर्गत पर्यावरण का संरक्षण, स्वच्छ पेय जल की उपलब्धता, जैव विविधता व संरक्षण, प्रदूषण की रोकथाम आदि शामिल है। सतत विकास यह पहचान कराता है कि संसाधन सीमित है, अतः हमें संसाधनों के बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग के साथ उनकी क्षमता बढ़ाना, वैकल्पिक संसाधनों की खोज, अपशिष्ट पदार्थों को फेंकने के बजाय उनका पुनरूपयोग एवं पुनर्चक्रण पौधरोपण के साथ सामाजिक, आर्थिक एवं प्राकृतिक पूंजी पर ध्यान केन्द्रित करना है। पर्यावरण का संरक्षण एवं सतत विकास कैसे हो, इसके पूर्व हम पर्यावरण क्या है और पर्यावरणीय अवक्रमण कैसे हो रहा है एवं इसका भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव क्या है पर विचार करेंगे–

i;koj.k

पर्यावरण उस वास्तविक जगत को कहते हैं जो भूमि जल, वायु, पेड़, पौधे और जानवरों के रूप में हमारे चारों ओर पाया जाता है और जो हमारे अस्तित्व एवं विकास का आधार है।

भारतीय परम्परा के अनुसार पाँच तत्व (वायु, भूमि, जल, वनस्पति और जीव–जन्तु) परस्पर सम्बधित और परस्पर आश्रित हैं। इन पाँच तत्वों में से एक में भी गड़बड़ होने पर दूसरों में असंतुलन उत्पन्न हो जाता है। अतः इनके बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है।

i;koj.k d: dk;l

पर्यावरण निम्नलिखित चार कार्य करता है–

1. पर्यावरण अर्थव्यवस्था को पुनरूत्पादित एवं गैर पुनरूत्पादित संसाधन प्रदान करता है।

2. पर्यावरण कचरे को आत्मसात करता है।

3. यह आनुवांशिक एवं जैव–विविधता प्रदान करके जीवन को धारण करता है। यह केवल तभी सम्भव है जब पर्यावरण को धारण करने की क्षमता बनी रहे।

4. यह प्राकृतिक दृश्य के रूप में सौंदर्यपरक सेवाओं का निर्माण करता है।

i;koj.k voØe.k

पर्यावरणीय अवक्रमण से आशय उत्पादन और उपभोग के प्राकृतिक संसाधनों की मात्रा एवं गुणवत्ता में कमी से है। इस प्रकार इसमें प्रदूषण और संसाधनों का अवक्रमण शामिल है।

1. वायु प्रदूषण 2. जलप्रदूषण 3. भूमि प्रदूषण 4. जैव–विविधता की हानि।

जैव–विविधता का धारणीय उपयोग स्थायी विकास का आधारभूत तत्व है। भारत संसार के वृहत जैव विविधता वाले 12 देशों में से एक है किन्तु, पिछले कुछ दशकों के दौरान औद्योगीकरण ने परिस्थितिकीय प्रणाली पर दबाव डाला है। इसने इसे परिवर्तित, यहाँ तब कि नष्ट भी किया है। जैव विविधता की हानि, अधिवास, कृषि के विस्तार, वेटलैंड को भरने, समृद्ध जैव विविधता वाले स्थलों का मानवीय प्रबंधन तथा औद्योगिक विकास के लिए रूपांरण, तटीय क्षेत्रों के विनाश तथा अनियंत्रित वाणिज्यिक दोहन से उत्पनन होती है।

इसके अलावा ठोस अपशिष्ट पदार्थ (कागज, प्लास्टिक कपड़े, धातु, सीसा, जैविक पदार्थ आदि) जो शहरी क्षेत्रों में परिवारों, व्यावसायिक संस्थानों और बाजारों में पैदा होते है देश में प्रदूषण और स्वास्थ्य सम्बंधी समस्याएं पैदा कर रहे हैं।

l:lk/kuk dk voØe.k

प्राकृतिक संसाधनों का अवक्रमण भी एक अर्थव्यवस्था के लिए गम्भीर समस्याएं पैदा कर देता है। यह अर्थव्यवस्था की उत्पादन क्षमता को कम करता है और इस प्रकार विकास के आधार को कम कर देता है। यह अवक्रमण दो प्रकार से होता है।

1. वनों का अवक्रमण अथवा वनों की कटाई 2. भूमि का अवक्रमण

1- ouk dh dVkbZ

पर्यावरण व अर्थव्यवस्था को धारणीय बनाए रखने में वनो की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वन बहुत सी वस्तुएं व सेवाएँ प्रदान करते है और जीवन व धरती के लिए आवश्यक है।

भारत वन कटाई का सामना कर रहा है। वन क्षेत्र में बड़े पैमाने पर होने वाली कमी को वनों का अवक्रमण अथवा वन कटाई कहा जाता है। वनों की कटाई के मुख्य कारण है–

- ईधन और औद्योगिक कार्यों के लिए
- सघन खेती के लिए
- नदी घाटी परियोजनाओं का निर्माण
- सड़के तथा औद्योगिक परियोजनाएं

बड़े पैमाने पर वनों की कटाई के निम्नलिखित दृष्परिणाम है–

- भूमि और जल स्रोतों का ह्रास।
- पौधों एवं जीव–जन्तुओं पर प्रतिकूल प्रभाव।
- वन क्षेत्रों अथवा उसके आस–पास के क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के जीवन और आर्थिक क्रियाकलापों पर विपरीत प्रभाव।
- देश के प्राकृतिक पर्यावरण का ह्रास।

2- Hkfe dk voØe.k vkj Hk&gk l

भूमि एक गैर पुनर्नवीकरण संसाधन है और यह सभी प्राथमिक उत्पादन प्रक्रियाओं का केन्द्र है। वर्षों से देश की भू–सतह विभिन्न प्रकार के अवक्रमणों का शिकार होती रही है।

(क) भू–क्षरण भूमि अवक्रमण का सबसे महत्वपूर्ण कारण है।

(ख) बड़ी मात्रा में पानी, रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के प्रयोग पर आधारित गहन खेती के तरीकों ने देश में जल प्लावन व क्षार की समस्याएं पैदा कर दी है।

(ग) कृषि उत्पादकता में वृद्धि करने के जोश में सीमांत भूमियों परकी जाने वाली सघन खेती के कारण भी भूमि का अवक्रमण हुआ है।

i;koj.k d voØe.k d dkj.k

भारत में पर्यावरण के अवक्रमण के मुख्य कारण निम्नलिखित है–

- प्राकृतिक संसाधनों का अत्याधिक शोषण।
- जनसंख्या में लगातार हो रही वृद्धि।
- शहरीकरण।
- पुनः प्रयोग होने वाले संसाधनों का कुप्रबंध।
- वन संसाधनों एवं भू–जल का अत्यधिक दोहन और भू–क्षरण।
- वाहनों और उद्योगों से निकलने वाला धुँआ इत्यादि।
- कृषि आधारित औद्योगिकरण।
- वनों की कटाई में वृद्धि।
- नदियों, नालों एवं जल के अन्य स्रोतों में औद्योगिक कचरों का डालना।
- कृषि में अंधाधुंध रासायनिक उर्वरकों एवं कीट नाशकों का प्रयोग।
- विलासितापूर्ण उपभोग शैली का दबाव।
- घरेलू, शहरी और औद्यगिक कूड़े–कचरे का बढ़ता ढ़ेर और भूमि की क्षमता से अधिक प्रदूषण।
- जैव विविधता की हानि।

lik"k.kh; ;k lrr fodkl d fy, Hke.Myh; i;kl

- स्टॉकहोम सम्मेलन (1972) स्वीडन।
- पृथ्वी शिखर सम्मेलन (1992) (रियो–डि–जेनेरो, ब्राजील)।
- क्योटो प्रोटोकॉल (1997) (क्योटो, जापान)।
- जोहांसबर्ग सम्मेलन (2002) द0 अफ्रीका।

- मांट्रियल सम्मेलन (2005) कनाडा।
- बाली सम्मेलन (2007) इंडोनेशिया।
- कोपेनहेगेन सम्मेलन (2009) डेनमार्क।
- कानकुन सम्मेलन (2010) मैक्सिको
- डरबन जलवायु परिवर्तन सम्मेलन (2011) दक्षिण अफ्रीका।
- रियो + 20 सम्मेलन (2012)

bUgsa Hkh tkusa&

संविधान के भाग तीन के अनुच्छेद 21 में वर्णित मौलिक अधिकार के अन्तर्गत टिकाऊ या सतत या संपोषणीय विकास की बात की गई है। किंकरी देवी बनाम स्टेट ऑफ एच0पी0वाद में कहा गया है। ''प्राकृतिक संसाधनों को सामाजिक विकास के प्रयोजन के लिए दोहन किया जाना चाहिए, किन्तु दोहन इतनी सावधानी से किया जाना चाहिए कि पारिस्थिति की और पर्यावरण गम्भीर ढंग से प्रभावित न हो।''

पर्यावरण के अवक्रमण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर कई तरह के दुष्प्रभाव हो रहे है। गैर–पुर्नउत्पादनीय संसाधनों की कमी हो रही है देश में 75 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर फैले वन भी भौगोलिक क्षेत्र के 33 प्रतिशत भू–भाग पर वन होने के राष्ट्रीय मानदण्ड से काफी कम है।

Hkkjr esa i;kZoj.k laj{k.k ds mik;

पर्यावरण की रक्षा करना हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य है। हाल के वर्षों में पर्यावरण के विषय के प्रति जागरूकता बढ़ी है। इस जागरूकता की झलक जून 1992 में रिडनो–डि जनेरो में हुए पृथ्वी सम्मेलन में दिखाई दी थी। इसमें एजेंडा–21 नामक विश्व कार्ययोजना स्वीकार की गई थी। इसका उद्‌देश्य पर्यावरण सम्बंधी आवश्यकताओं को विकास की आकांक्षाओं के साथ एकीकृत करना था। संयुक्त राष्ट्र महासभा ने भी जून 1997 के अपने विशेष सत्र में इसी बात को फिर दोहराया था। भारत में भी पिछले कुछ वर्षों से पर्यावरण की सुरक्षा और प्राकृतिक साधनों के संरक्षण के लिए विधान, नीतियाँ और कार्यक्रम बनाए गए है। पर्यावरण के प्रति भारत सरकार की नीति ऐजेंडा–21 सिद्धान्तों पर ही आधारित है। भारत सरकार ने निम्नलिखित विषयों पर नीतिगत वक्तव्य जारी किए है–

- वानिकी
- प्रदूषण कम करना।
- राष्ट्रीय संरक्षण नीति।
- पर्यावरण और विकास

भारत सरकार ने पर्यावरण संरक्षण के लिए अनेक उपाय किये हैं–

1. देश में पर्यावरण सम्बंधी अनेक कार्यक्रमों की योजना प्रोत्साहन, समन्वयन एवं क्रियान्वयन के लिए एक अलग से पर्यावरण एवं वन मंत्रालय का गठन किया गया है।
2. पर्यावरण की समस्या से व्यापक रूप से निबटने के लिए भारत सरकार ने जैव–विविधता पर एक राष्ट्रीय नीति और कार्य योजना राष्ट्रीय वन नीति, राष्ट्रीय संरक्षण, नीति, पर्यावरण और विकास पर नीतिगत सम्बंधी कार्यक्रम अपनाये है।

3. देश में जल एवं वायु प्रदूषण रोकने के लिए प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का गठन किया गया है। राज्य स्तर पर यह काम राजय प्रदूषण नियंत्रण बोर्डो के माध्यम से किया जा रहा है।
4. पर्यावरण के अनुकूल उपभोक्ता वस्तुओं पर लेबल लगाने के उद्देश्य से ''ईकोमार्क'' लेबल की व्यवस्था की गई है।
5. देश में चरणबद्ध ढंग से वाहनों के ईंधन में सुधार लाने का कार्यक्रम शुरू किया गया है।
6. 1992 में राष्ट्रीय वृक्षारोपण और पारिस्थितिकी विकास बोर्ड की स्थापना की गई। यह वृक्षारोपण परिस्थितिकीय संतुलन एवं परिस्थितिकीय विकास से सम्बंधित गतिविधियों को प्रोत्साहित करने का काम करता है।

पर्यावरण और अर्थव्यवस्था एक–दूसरे पर निर्भर है और एक दूसरे के पूरक है। जो विकास पर्यावरणीय मुद्दों की अनदेखी करता है, वह टिकाऊ नहीं हो सकता। अतः पर्यावरण का स्थायित्व टिकाऊ विकास की पूर्व शर्त है। आज पूरे विश्व में विकास के स्थायित्व के बारे में दो मुख्य समस्याएं है।

1. विकसित देशों में पाई जाने वाली अवत्ययी और विलासी उपभोग शैली। विकासशील देशों का संपन्न वर्ग भी इस विलासी उपभोग शैली का अनुकरण करता जा रहा है।
2. विशेष रूप से विकासशील देशों में जनसंख्या का बड़ा आकार और उसमें तेजी से वृद्धि हो रही है। इन दो चिंताओं के बीच विकास की प्रक्रिया को कैसे बनाए रखा जाए।

इसके अलावा वर्तमान उत्पादन टैक्नॉलाजी भी दो मुख्य समस्याएं पैदा कर रही है–

1. उत्पादन की वर्तमान टेक्नालॉजी, प्राकृतिक साधनों का बेरहमी से शोषण कर रही है। यह दोनों ही प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग कर रही हैं। गैर पुनरूत्पादनीय साधन (जैसे–कोयला, गैस और पेट्रोलियम) तथा पुनरूत्पादनीय साधन जैसे वन, पशु और पानी। आशंका है कि इन प्राकृतिक साधनों का इसी प्रकार प्रयोग होता रहा तो भावी पीढ़ी को इन प्राकृतिक संसाधनों से वंचित होना पड़ेगा।
2. वर्तमान उत्पादन टेक्नॉलाजी पर्यावरण और पानी को भी प्रदूषित कर रही है। यह कचरा, धुँआ और विभिन्न प्रकार की जहरीली गैसों को बढ़ाता जा रहा है। परिणाम स्वरूप हमें शुद्ध वायु और शुद्ध पानी नहीं मिल पा रहा है।

इन सब समस्याओं के कारण विकास के वर्तमान पथ और प्रक्रिया को जारी रखना उचित नहीं कहा जा सकता। किसी न किसी विकल्प को तलाश जाना चाहिए। इसी से स्थायी विकास की अवधारणा का जन्म हुआ है।

स्थायी विकास को भावी पीढ़ी की अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता के साथ समझौता किए बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

यह अवधारणा अंतरपीढ़ी (Inter generation) और अंतरापीढ़ी (Inter generation) दोनों की ओर ध्यान देती है। इस प्रकार यह दोनों पीढ़ियों (वर्तमान और भावी) को अपनी सम्भाव्य क्षमताओं का सर्वोत्तम उपयोग करने में समर्थ बनाती है।

vH;kl ç'u

1. सतत विकास का क्या अर्थ है ?

2. सतत विकास की आवश्यकता क्यों है ?

3. संपोषणीय विकास के लिए मूलभूत तत्व क्या है ?

4. पर्यावरण अवक्रमण क्या है ?

5. सतत विकास के लिए कौन–कौन भूमण्डलीय प्रयास किये गये है ?

6. भारत में पर्यावरण संरक्षण के कौन–कौन से उपाय किये जा रहे है ?